# विज्ञान-लोक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

## अन्दर पढ़िए


खगोलीय महत्त्व के स्थल ३
—डा. महेन्द्रकुमार
पारमेंत्यर और आलू ७
—श्यामलाल श्रीवास्तव
घातक रेडियो-विकिरण ११
—एस. पी. मिश्र
मोनोरेल १४
—नरेन्द्रमोहन माहेश्वरी
हीरे की कहानी १७
—विनोदकुमार सक्सेना
अन्तरिक्ष उड़ान और वैज्ञानिक अनुसंधान २३
—रेमण्ड एल. बिस्पलिंगोफ
तारे की कहानी २८
—जगदीशचन्द्र गोविल
धातु और संकर धातु ३३
—सत्यकुमार
तरह-तरह की पत्तियाँ ३८
—कुमारी रेखा टंडन
द्रव द्वारा यंत्र-संचालन ४२
—राजेन्द्रप्रसाद गर्ग
मुझे सीपी कहते हैं ४५
—जगदीशप्रसाद अग्रवाल
प्राचीन मिस्र के शव—ममी ४९
—दीनानाथ भार्गव
आइसक्रीम की बहार—वेनीला ५४
—बाँकेबिहारीलाल


**स्थायी स्तम्भ**


विचित्र संसार ३६
विज्ञान क्लब ५७
इनाम लो ६०
आपके प्रश्न ६१
करो और देखो ६२
तुम्हारी कलम से ६४


## अपनी बात

१४ मई को काल के क्रूर हाथों ने डाक्टर रघुवीर को—हिन्दी के प्रबल समर्थक को—हमसे छीन लिया। डाक्टर रघुवीर का जन्म १९०२ में रावलपिण्डी में हुआ था। आपने कई बार यूरोप और एशिया का भ्रमण किया और अपने साथ अनेक महत्त्वपूर्ण एवं दुर्लभ पाण्डुलिपियाँ लाये। आपने भारत के प्राचीन वैभव और संस्कृति पर विशेष कार्य किया। आप अनेक भाषाओं के प्रकाण्ड पंडित थे।

डाक्टर रघुवीर ने पारिभाषिक शब्दों के विशाल भंडार का सृजन कर हिन्दी की प्रगति के कार्य को आगे बढ़ाया है। आज विज्ञान के अध्ययन और अध्यापन में हिन्दी को जो स्थान प्राप्त है उसका समस्त श्रेय डाक्टर रघुवीर को है।

डाक्टर रघुवीर एक कुशल लेखक एवं योग्य विद्वान ही नहीं, एक सफल राजनीतिज्ञ भी थे। १९६२ तक आप कांग्रेस के सक्रिय सदस्य रहे लेकिन हिन्दी के प्रश्न पर मतभेद हो जाने के कारण कांग्रेस से आपने त्यागपत्र दे दिया। इस समय आप जनसंघ के अध्यक्ष थे।

डाक्टर रघुवीर की मृत्यु से हिन्दी ने अपना एक महान हितैषी एवं योद्धा खो दिया। डाक्टर रघुवीर के प्रति हमारी सच्ची श्रद्धांजलि यही होगी कि हम उनके कार्य को आगे बढ़ाएँ।


वर्ष ४

अंक ५

मूल्य
क प्रति : ७५ नये पैसे
र्षिक : ९ रुपये

सम्पादक : शंकर मेहरा
प्रकाशक : श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

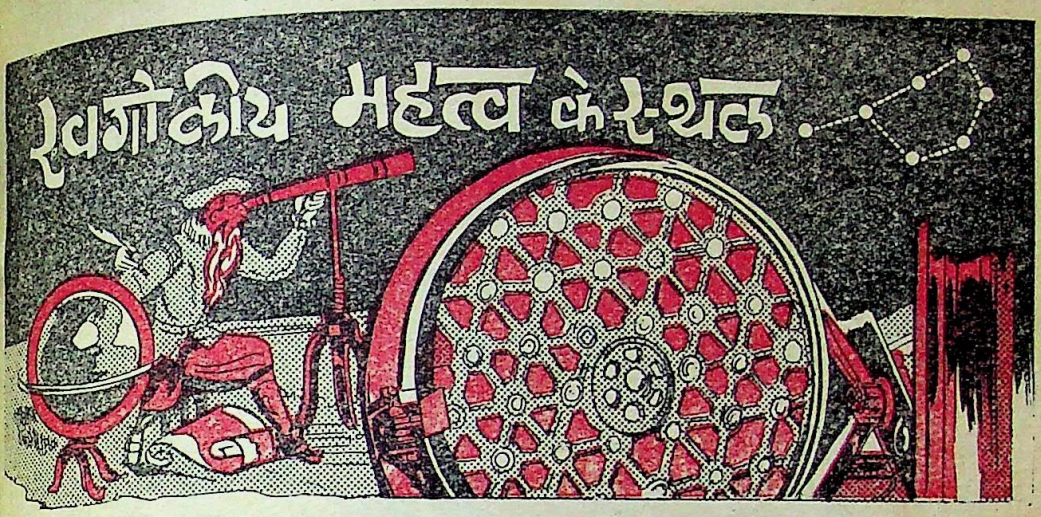


डा. महेन्द्रकुमार

प्राचीनकाल के साहसिक यात्री और नाविक आज जैसे वैज्ञानिक साधनों से सम्पन्न न होते हुए भी तारक और नक्षत्रीय गणनाओं के आधार पर लम्बी यात्राएँ तथा पृथ्वी की प्रदक्षिणा कर लेते थे। आकाश में उड़ते पक्षियों तथा मेघ समूहों को देखकर ही वे दिशा-ज्ञान प्राप्त कर लेते थे। आइसलैण्ड, नार्वे, स्वीडन, उत्तरी साइबेरिया आदि उत्तरी ध्रुवीय प्रदेशों के निवासी अन्य स्थानों के निवासियों की अपेक्षा सूर्य की गतिविधि से अधिक परिचित रहते हैं। उन्हें सूर्य के लक्षणों द्वारा पहले ही से ज्ञात हो जाता है कि कब वे लम्बी रातें आने वाली हैं जब महीनों तक सूर्य के दर्शन न होंगे। इसी प्रकार चाँद-सितारे भी समय से पूर्व ही यह संकेत दे देते हैं कि पुनः कब सूर्योदय होगा। एशिया के एक सिरे को दूसरे सिरे से मिलाने वाली संसार की सबसे लम्बी ट्रान्स साइबेरियन रेलवे में बैठकर यदि समूची यात्रा की जाए तो व्योम मण्डल के उत्तरी प्रकाश-पुंजों की वे दुर्लभ झाँकियाँ देखने को मिलेंगी जो अन्यत्र उपलब्ध ही नहीं। वे झाँकियाँ भी यदि सूर्य-कलंकों के प्रवृत्तिकाल में देखने को मिलें तो कहना ही क्या !

## खगोल-ज्ञान के ये स्रोत

एक जिज्ञासु यात्री को खगोल-ज्ञान की प्राप्ति के लिए आकाश के अतिरिक्त पृथ्वी पर भी अनेक साधन उपलब्ध हैं। नक्षत्रावलोकन के लिए वेधशालाएँ हैं, ऐतिहासिक इमारतें हैं और प्रागैतिहासिक निमार्णों के भग्नावशेष हैं तथा दूरदर्शी एवं अन्य विविध उपकरण हैं।

इंग्लैण्ड की सैर करने वालों को वहाँ संसार-प्रसिद्ध प्रस्तर-स्तम्भों (Stonehenge) के भग्नावशेष स्वरूप ८०-९० स्तम्भ तथा शिलाखण्ड देखने को मिलेंगे। गोलाकार में खड़े ये स्तम्भ लगभग १०० फुट व्यास की परिधि घेरे हुए हैं। दो खड़े स्तम्भों पर लेटा हुआ एक शिलाखण्ड मानो उनका प्रवेश द्वार है। अनुमान है कि प्राचीन काल के नक्षत्र-विद् इन्हीं स्तम्भों पर खड़े होकर सूर्य का निरीक्षण करते रहे होंगे। इन स्तम्भों के खड़े करने में यह विशेषता है कि आज भी सूर्य के सांक्रान्तिक गति-परिवर्तनों को ये स्पष्टतः प्रदर्शित करते हैं।

मैक्सिको पहुँचने पर यात्री को Teotihuacan नामक प्रसिद्ध सूर्योपासक पिरामिड मिलेगा। उस पिरामिड के चारों



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

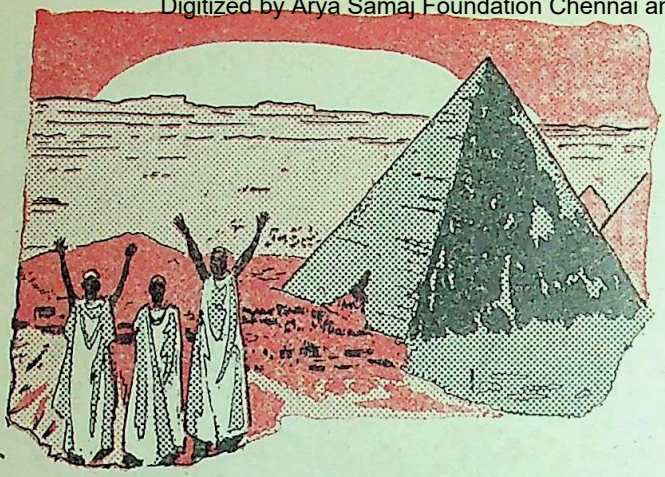

प्राचीन मिस्र के निवासी सूर्य तथा चन्द्र की गति से दिशा और समय का ज्ञान कर लेते थे

ओर, प्रत्येक पार्श्व पर ९१ सीढ़ियाँ हैं। अतः चारों ओर की सीढ़ियाँ तथा सर्वोच्च प्लेटफार्म मिलाकर ३६५ की संख्या बनती है। वर्ष में दिन भी ३६५ ही होते हैं! वहीं नेशनल म्यूजियम भी है जहाँ पूर्वकालीन जन्त्री (calendar) युक्त शिलालेख सुरक्षित हैं। उनसे विदित होता है कि वर्ष को उन्होंने २० दिन के १८ मास में और ५ दिन के एक लघु मास में विभाजित कर रखा था। इसके अतिरिक्त चन्द्रमा तथा शुक्र की गति प्रदर्शित करते हुए १-१ शिलालेख और भी हैं। ये तीनों जन्त्रियाँ आश्चर्य-जनक रूप से खगोल एवं गणित की शुद्ध गणनाएँ प्रदर्शित करती हैं। वहीं पर सूर्य तथा चन्द्र के विभिन्न ग्रहणों के भी शिला-लेख सुरक्षित हैं। इनसे अनुमान लगाया जा सकता है कि पूर्वकालीन लोगों का खगोल-ज्ञान कितना विलक्षण था।

दक्षिणी मैक्सिको में लुप्तप्राय नगर मान्टे आल्बन की खुदाई में अनेक ऐसी इमारतें निकली हैं जिनके असंख्य झरोखों से अनुमान लगाया जा सकता है कि वे झरोखे खगोलीय निरीक्षण में काम आते होंगे। इसी प्रकार पेरू में सूर्य और चन्द्र के दो प्राचीन मन्दिर हैं जिनमें सूर्य के लिए सोने का और चन्द्र के लि चाँदी का थाल लटकाया जा था। यद्यपि वर्षों हुए वे सो चाँदी के थाल लुटेरों की भेंट चुके हैं किन्तु आज भी मन्दिर खण्डहरों में विशाल प्रस्त स्तम्भों के मध्य खड़े होना रोमांचक नहीं। निकट पहाड़ियों पर स्थित Mach Pischu नगर के सूर्य मन्दिर देखकर भी दंग रह जाना पड़ है। वहाँ प्रस्तर-निर्मित ए विशाल थाल अन्य निर्माणों से कहीं अधि प्रभावशाली है।

मिस्र के पिरामिडों का आकर्षण यात्री को बहुत दूर से खींच लाता है। हजा वर्ष पूर्व का काहिरा के निकट गीजा प निर्मित पिरामिड एक वेधशाला के समा ही है। उसकी मध्यरेखा पर निश्चित

कांस्य-युग के प्रतीक, स्टोनहेन्ज (Stonehenge नामक प्रस्तर-मन्दिर के ये अवशेष आज भी दर्श को रोमांचित करते हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुल काँगड़ी

से तारों का प्रकाश पड़ता है। शुद्ध रूप में जन्त्री अर्थात् कलेण्डर बनाने के लिए आज का युग प्राचीन मिस्रवासियों का ऋणी है; क्योंकि अन्य लोग चन्द्रमा की अनिश्चित गति विधि से वर्ष की गणना करते थे, जबकि मिस्रवासियों ने सूर्य की ही गति को आधार मान रखा था।

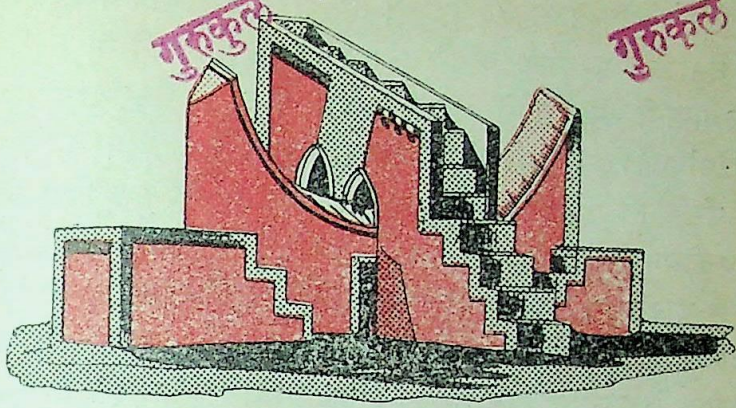

प्राचीन ईरानियों द्वारा निर्मित, ये ज्यामितीय आकृतियाँ सौर-निरीक्षण में काम आती थीं

एरिजोना, साइबेरिया और एस्टोनिया खगोलीय घटना-दुर्घटनाओं के स्मारक हैं। वहाँ की धरती अनेक बार आकाश की निर्मम चोटें सहती आयी है। चोटों के वे निशान वहाँ आज भी देखने को मिलते हैं। एरिजोना का लगभग एक मील चौड़ा और ५०० फुट गहरा गड्ढा संसार-प्रसिद्ध है। वह गड्ढा कब बना होगा इसका कोई लेखा सुरक्षित नहीं है। उससे छोटा किन्तु वैसा ही विकट गड्ढा प्रलयंकरी

जन्तर-मन्तर का एक दृश्य

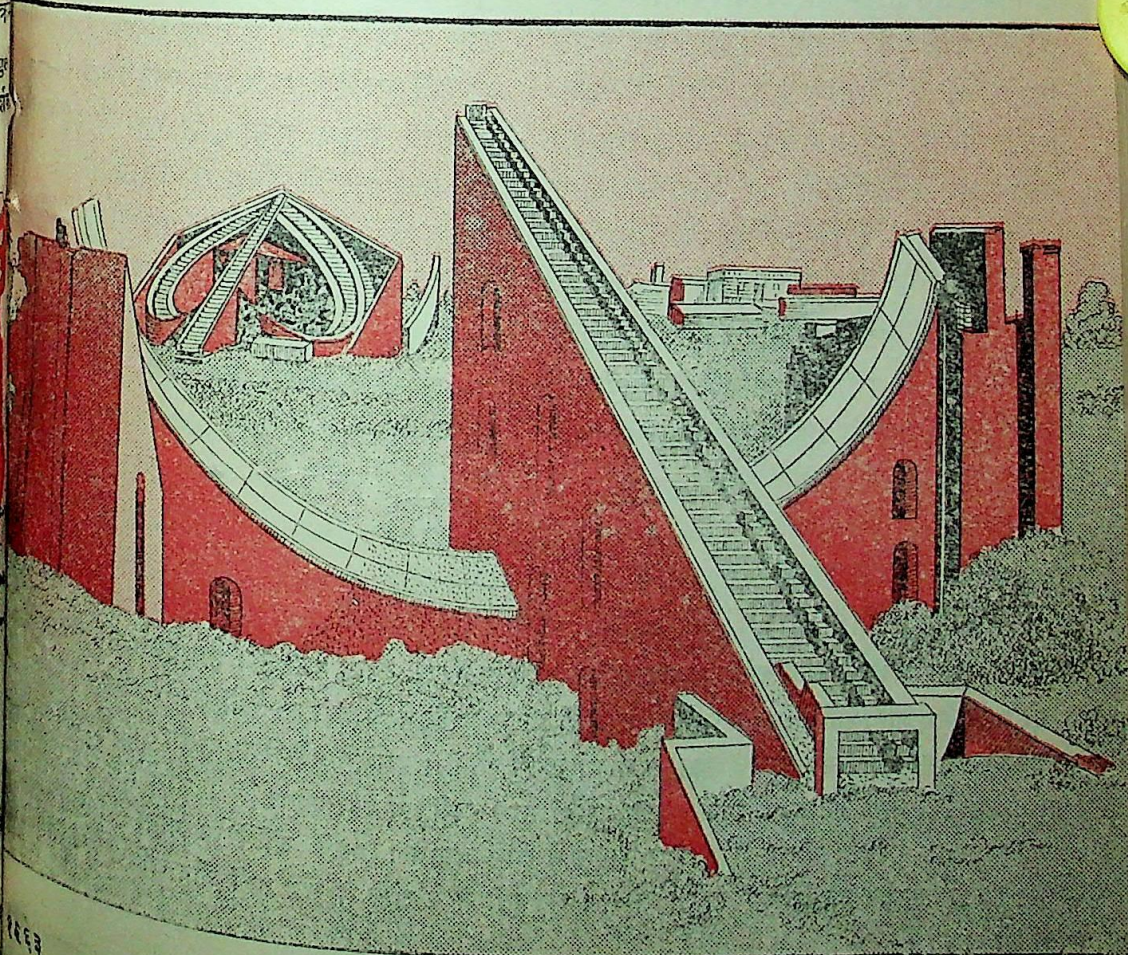

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकृति के कोपस्वरूप ४० वर्ष पूर्व साइबेरिया में बना था। इसके अतिरिक्त अब तक के उल्कापातों में सबसे वृहत् होबा वेस्ट (Hoba West) दक्षिणी अफ्रीका में भूमि में धँसा हुआ देखा जा सकता है। उसका वजन अनुमानतः ६० टन है।

भारत की भी जयपुर वेधशाला तथा दिल्ली का जंतर-मंतर बहुत प्रसिद्ध हैं। जयपुर में प्राचीन काल का १०० फुट लम्बा चौड़ा सौर-थाल अपने ढंग का अनोखा है। आज वह केवल विचित्रालय की एक दर्शनीय वस्तु रह गया है, किन्तु जब यह बनकर तैयार हुआ था तब हजारों व्यक्ति रात-दिन इसी पर अपने खगोल-अध्ययन करते थे। इसी प्रकार दिल्ली का जंतर-मंतर भी मात्र दर्शनीय वस्तु रह गया है।

### आधुनिक वेधशालाएँ

केपटाउन स्थित रायल ऑब्जरवेट्री १०० वर्ष पूर्व जहॉन हर्शल के कुशल निरीक्षणों की प्रतीक है। ग्रीनविच वेधशाला अन्तरराष्ट्रीय समय-मान का केन्द्र है। संसार भर की घड़ियों का संचालन इसी के द्वारा होता है। मैनचेस्टर यूनिवर्सिटी वृहत् रेडियो-दूरदर्शी है जिसके एरियल का व्यास २०० फुट है। पेरिस की वेधशाला विशेषतः शनि तथा मंगल ग्रहों के निरीक्षण के लिए है। इसकी पुलकोवा वेधशाला अपने स्थापना काल में संसार में सर्वोत्तम मानी जाती थी।

संयुक्त राज्य अमरीका में खगोल-अध्ययन के सबसे अधिक साधन उपलब्ध हैं। संसार के कुछ विशालतम दूरदर्शी यहीं हैं। केलिफोर्निया में ही दो विशालतम दूरदर्शी हैं। माऊंट पालोमर का दो सौ इंच, माऊंट विलसन का सौ इंच और पासाडैना का साठ इंच व्यास का दूरदर्शी संसार प्रसिद्ध हैं। पालोमर के दूरदर्शी ने तो अभूतपूर्व उपलब्धियाँ प्राप्त की हैं। इस दूरदर्शी द्वारा अब तक की निरीक्षण-दूरियों से दूनी दूरी करके अवलोकन के अनेक रोचक तथ्य प्राप्त किए जा सके हैं।

किसी भी वेधशाला का निरीक्षण अलभ्य जानकारी का विषय है। वेधशाला के कमरे की छत रंगमंच के परदे की तरह यों खुलती है मानो उस कमरे ने आकाश की ओर आँख उठायी है तथा सैकड़ों टन भारी दूरदर्शी चाहे जिस दिशा, चाहे जिस कोण में निःशब्द सहज घुमाव ले रहा है, दूरदर्शी की सहायता से विशाल व्योम के अनन्त क्रिया-कलापों को देखकर यह सोचना पड़ता है कि कहाँ तो अनन्त ब्रह्माण्ड और कहाँ अति क्षुद्र मानव, तथापि मानव की इन महान् उपलब्धियों का लोहा मानना ही पड़ता है।

---

## प्लास्टिक-कांच के पाइप··· स्टील की बड़ी बचत

पाइप शब्द के साथ लोहा अथवा स्टील का नाम स्वतः आता रहा है। अब इसमें भी क्रान्ति ला दी गयी है। सोवियत-निर्मित प्लास्टिक-कांच के पाइप, लोहे के पाइपों को तेजी से पीछे छोड़े जा रहे हैं। लोहे के पाइपों में सबसे बड़ी शिकायत मोर्चा लगने की है। इसके अतिरिक्त, संसार के लिए अधिकतम उपयोगी धातु, स्टील के उत्पादन का दसवाँ भाग इन्हीं में खप जाता है। मास्को में तैयार किये गए ये पाइप मुख्यतः मीलों लम्बी तेल-लाइन में काम आयेंगे। इसके अतिरिक्त पानी की लाइनों में भी इनका उपयोग अधिक सुविधापूर्ण रहेगा। मजबूती में ये लोहे से कम नहीं और अधिक लचीले होते हैं सो अलग।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

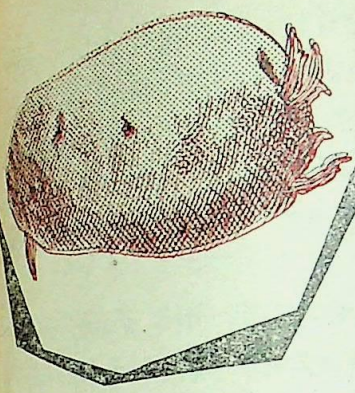

# पारमेंत्यर और आलू

श्यामलाल श्रीवास्तव

आलू की उपयोगिता आज गेहूँ के बाद है। ३-४ शताब्दियों पूर्व यह इतना प्रचलित नहीं था। उससे पूर्व तो यह अमरीका के अतिरिक्त कहीं परिचित भी नहीं था। १६वीं शताब्दी के उत्तरकाल में इसने सर्वप्रथम ब्रिटेन तथा आयरलैण्ड में प्रवेश पाया। वहाँ से फ्रांस तक पहुँचने का इसका इतिहास बड़ा मनोरंजक है। इस धरती की सौगात (Earth's Apple) अर्थात् *Pommes de terre* से परिचय पाने के लिए फ्रांस अपने यहाँ के एक राज्य-चिकित्सक, पारमेन्त्यर के प्रति कृतज्ञ है।

## कल का दुर्भाग्य, आज का सौभाग्य

पारमेन्त्यर तत्कालीन फ्रेंच सम्राट लुई का सैन्य-चिकित्सक था। उन दिनों इंगलैण्ड तथा फ्रांस में लड़ाइयाँ बराबर चल रही थीं। संयोगवश एक अवसर पर पारमेन्त्यर युद्धबन्दी बनाकर इंगलैण्ड भेज दिया गया। फ्रांस को पारमेन्त्यर का चले जाना एक दुर्भाग्य प्रतीत हुआ किन्तु कालान्तर में वह सौभाग्य ही सिद्ध होकर रहा। कारागार से मुक्त होकर पारमेन्त्यर एक नयी वस्तु लेकर स्वदेश लौटा।

वह स्वदेश के लिए भेंट स्वरूप आलू की सौगात लाया। इंगलैण्ड में बन्दी अवस्था में उसने अपने मधुर स्वभाव से समस्त अधिकारियों का मन जीत लिया था। अपनी कुशाग्र बुद्धि और सूझ-बूझ से नित नयी वस्तुओं का अध्ययन करता रहा। वहाँ उसने अनेक बार आलू को बड़े स्वाद से खाया और खेतों में उपजाने के ढंग का अध्ययन किया।

पारमेन्त्यर फ्रांस में आलू लाया तो सही किन्तु यहाँ भी उसने सूझबूझ से काम लिया। चिकित्सक होने के नाते वह लोकमानस का बड़ा पारखी था। आलू जैसी नवीन किन्तु अति साधारण वस्तु की यों ही घोषणा कर देना उसने उचित नहीं समझी। पहले उसने सम्राट लुई को प्रसन्न कर लिया और एक नयी वस्तु उपजाने के लिए कहकर पचास एकड़ भूमि पुरस्कार में प्राप्त कर ली। परन्तु उसने आलू का नमूना सम्राट या अन्य किसी को दिखाया नहीं। समय पाकर आलू के पौधों ने ज्यों ही फूल देने प्रारम्भ किये, वह सम्राट के समक्ष जा पहुँचा।

"महाराज, वह जो भूमि आपने मुझे ....."

"हाँ, हाँ; तुमने किसी प्रयोग के लिए



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

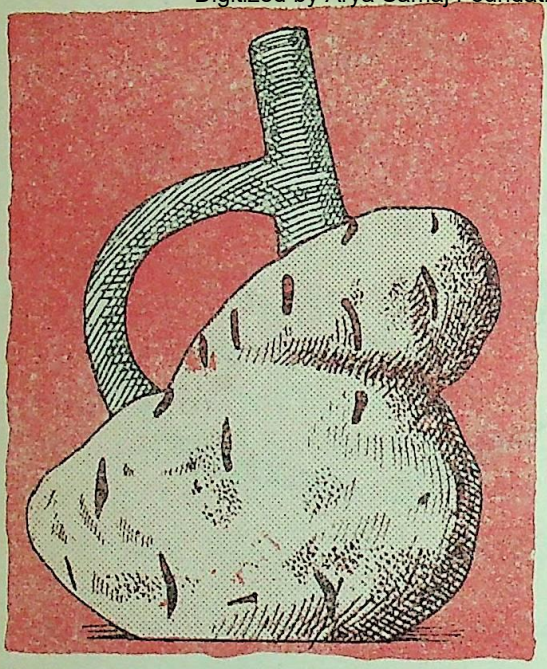

**पेरू देश में खुदाई से प्राप्त, लगभग ३००० वर्ष प्राचीन सुराही का यह नमूना दो आलुओं के रूप में बनाया गया है**

ली थी न ! कहो, उसमें क्या अनाज उगाया है ?"

"पोटैटो, महाराज ।"

"पो···टै···टो ! क्या अटपटा-सा नाम है । यह भी कोई दवा है क्या ?"

"जी, दवा तो नहीं; फल बड़ा स्वादिष्ट लगता है उसमें । आज फूलों की बहार देखने चलिएगा ?"

"क्यों नहीं ? अवश्य चलेंगे"·····और पारमेन्त्यर की क्यारियों में लगे आलुओं के फूल विशेष आकर्षण तथा मोहक सुगन्धयुक्त न होते हुए भी सम्राट लुई के अँगरखे पर सजकर अद्वितीय गौरव पाने लगे । पारमेन्त्यर ने एक विनती और भी की :

"महाराज, अब फल लगने ही वाले हैं ।"

"बड़ी खुशी है । कहो, क्या चाहते हो?"

"मेरी क्यारियों पर फौजी पहरा होना चाहिए वर्ना लोग मेरी फसल को लूट ले जाएँगे ।"

और, पहरा बिठा दिया गया ।

## पहले उत्सुकता, फिर चोरी

स्वभावतः लोगों की उत्सुकता फूट पड़ी । कुछ दिनों बाद पहरा शिथिल पड़ता देखकर उसमें से आलू चोरी भी जाने लगे । वास्तव में पारमेन्त्यर चाहता भी यही था कि लोगों की उत्सुकता उस फल के प्रति होने लगे । तभी तो आलू का महत्त्व बढ़ेगा !

चोरी जाने वाले पौधे क्रमशः फ्रांस में जगह-जगह उपजने और फैलने लगे । पारमेन्त्यर ने लोगों को खाने-पकाने की विधि भी बता दी थी । तब तक भी उस अद्भुत फल का उचित नाम नहीं सोचा जा सका था । अतः एक बार जो *Pommes de tene* नाम रख दिया गया उसी नाम ने पारमेन्त्यर का नाम फ्रांस वालों के लिए आलू-प्रवर्तक के रूप में अमर कर दिया ।

## आलू का प्रचलन कहाँ से ?

निकट अतीत के आलेखों में इसका प्रमाण कहीं नहीं मिलता । कुछेक प्राच्यावशेषों से अनुमान लगाया जाता है कि लगभग ४००० वर्ष पूर्व यह दक्षिणी अमरीका में उगाया जाता होगा । आज भी यह वहाँ समुद्री सतह से ६००० से १५००० फुट की ऊँचाई के मध्य उगाया जाता है । वहाँ से लामा नामक खच्चरों पर लाद-लादकर निचले सागरतटीय प्रदेशों तक पहुँचाया जाता है । सन् २०० के मध्यकालीन अवशेषों में से कुछ सुराहियों पर आलू के चित्रों तथा कब्रों से प्राप्त आलुओं द्वारा यह भी अनुमान लगाया जाता है कि उन दिनों आलू का उपयोग खाद्य-संरक्षण के रूप में भी किया जाता होगा । इसके लिए वे इसके गूदे को विशिष्ट विधियों द्वारा सुखाकर चौकोर रूप में बना लेते थे जिन्हें चूनो (chuno) कहते थे । आलू का प्राचीन नाम पैपस (papas) है । १६वीं शताब्दी में यूरोप में



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आकर वहाँ के पूर्व-प्रचलित (Sweet Potato) से संयुक्त होकर इसका नाम 'पैपस' से 'पोटैटो' बन गया।

**विस्तृत वंशधारी आलू**

आलू उन वनस्पतियों में है जिसकी सैकड़ों उपजातियाँ हैं। भूमि के अन्दर उगने वाला यह फल अन्यान्य कन्दमूलों से सर्वथा भिन्न है। कन्दमूलों में तो उनके मूल अर्थात् जड़ों के उभार (tumors) लगते हैं जबकि इसके भूमिगत तनों में उभार लगते हैं। अतः आलू का वर्गीकरण ट्यूबरसम (tubersum) जाति की, सोलेनम (Solanum) श्रेणी में किया गया है। इसमें जाति-भेद के अनुसार ही उपज-काल, बाह्यावरण के रंग-रूप, गूदे के प्रकार, स्वाद तथा व्यावसायिक उपयोगिता में पर्याप्त भिन्नता है। कहीं गूदा हलका पीला है, कहीं बिलकुल श्वेत। आयरलैण्ड का सफेद गूदे का आलू यूरोप में अत्यन्त लोकप्रिय है। आलू के कुल उत्पादन का ८०% भाग यूरोपीय देशों से प्राप्त होता है।

**जाति जाति के आलू,**

आलू की लोकप्रियता अप्रतिम है। हमारे देश में पहाड़ी आलू, फरुखाबादी आलू, देशी आलू; कहीं छोटे टेंटी जैसे, तो कहीं बड़ी गेंद जैसे; कहीं भूरे, पीले, ललछौंहे, तो कहीं सफेद नजर आते हैं। कड़े छिलके के आलू की अपेक्षा अँगुली से छूट जाने वाले कागजी छिलके के आलू अधिक पसन्द किये जाते हैं। आलू पहले ही से ठण्डे, अँधेरे कक्षों तथा कोल्ड स्टोरेज में सुरक्षित भी रखे जाते हैं जिससे अभाव के दिनों में इनका उपयोग हो सके।

**आलू का पौधा**

आलू का पौधा भूमि से लगभग १-१½ फुट ऊँचा होता है। यह बीजों द्वारा नहीं उगाया जाता। आलू की गाँठ में जो आँखें होती हैं, वहीं से जड़ें फूटती हैं। अतः आलू ही भूमि में गड़ जाते हैं। इसके कुछ हरे, कुछ ललछौंहे हरे तने कम या अधिक शाखाओंयुक्त रहते हैं। तनों के रंगों में जो भिन्नता होती है, वह उन पर छाये हुए रोयों के कारण रहती है। आलू का सम्बन्ध तीव्र विषैली वनस्पति नाइटशेड (nightshade) से भी है। अतः इसमें यह विचित्रता है कि इसका भूमिगत भाग तो प्रिय तथा पौष्टिक खाद्य है और ऊपर का हरा भाग, विशेषतः कच्ची बेरियों जैसे फल का भाग विषैला है। इसी कारण यूरोप में प्रवेश पा जाने के भी १००-२०० वर्षों तक तो जर्मनी तथा अन्य देशों में यह लोकप्रिय न हो सका। वे लोग इसकी हरी बेरियों को फल समझकर चखते थे और कड़वे होने से थू-थू कर देते थे। कुछ लोग खा लेने पर बीमार भी पड़ जाते थे क्योंकि हरे भाग में सोलेनिन (Solanine) नामक विषैला पदार्थ रहता है। अतः आलू

**लोंग कीपर** (Long Keeper) **नामक यूरोपीय आलू की एक उत्तम जाति**

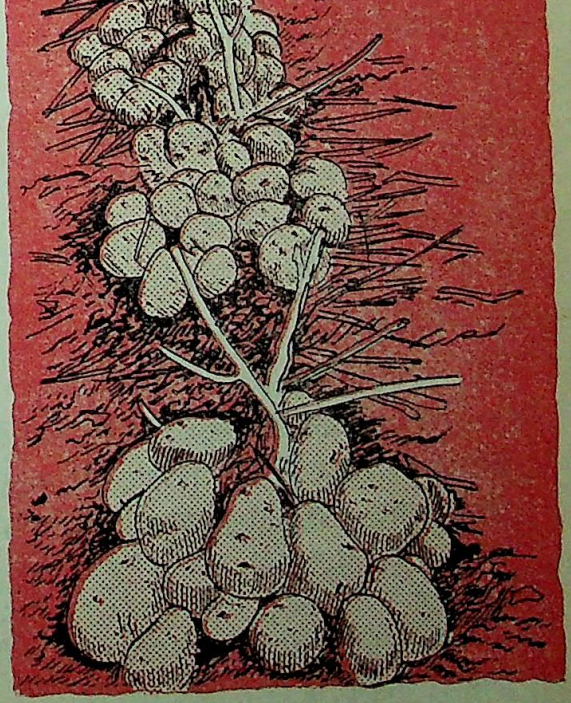


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

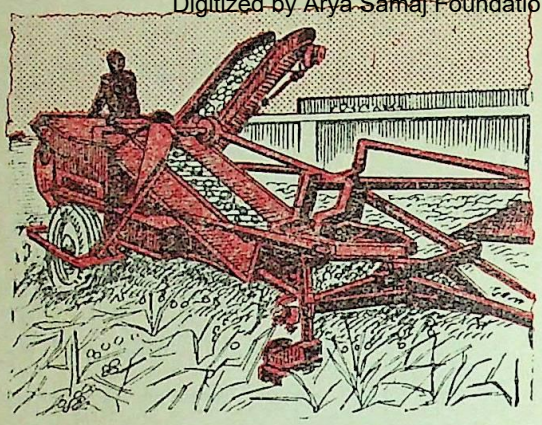

आलू खोदने का यह आधुनिक यन्त्र एक-साथ बीस आदमियों का काम करता है

में भी जहाँ हरा भाग दिखाई पड़े, काटकर फेंक देना चाहिए।

आलुओं की बुवाई (गड़ाई) वर्ष में प्रायः ९ महीने की जाती है। सर्दियों की फसल उगाने के लिए अक्तूबर-नवम्बर और गर्मियों के लिए मार्च-अप्रैल में बोये जाते हैं। ये प्रायः दो महीने में तैयार हो जाते हैं। इनके लिए सामान्यतः भुरभुरी मिट्टी उपयुक्त रहती है। इन्हें चिकनी मिट्टी नहीं चाहिए। किंचित् अम्लीय, कार्बनिक तथा खनिज द्रव्यों युक्त रेतीली और दलदली भूमि अधिक अनुकूल रहती है। इन्हें गाड़ने के लिए भूमि की गहराई इनके स्थान विशेष तथा जलवायु पर आधारित रहती है। यह गहराई २ से ८ इंच तक की होती है। भूमिगत गाँठों को सूर्य का प्रकाश हानि पहुँचाता है। अतः सूर्य से इनका बचाव आवश्यक है।

### तत्त्व रचना

आलू में १/५ भाग घनत्वपूर्ण और शेष भाग जलपूर्ण होता है। घन भाग में श्वेतसार का ८०% से ८८% होता है। शेष में शर्करा ३% से ८॥% तथा नाइट्रोजनीय तत्त्वों में भी आधा भाग प्रोटीन का तथा आधा एमिनो अम्लों का होता है। आलू में वसा अथवा तैल भाग बिलकुल नहीं होता। इसमें फास्फोरस, कैल्शियम, पोटैशियम तथा सूक्ष्मांशों में लौह, सोडियम, क्लोरीन तथा गंधक रहती है। इसमें एस्कोर्बिक अम्ल अर्थात् विटामिन सी और विटामिन बी२ काम्प्लेक्स प्रचुरता से रहते हैं। इसमें विटामिन ए और डी का अभाव रहता है। विज्ञान के बल पर मनुष्य ने आलू को रोगों से बचाना सीख लिया है।

आलू का औद्योगिक महत्त्व भी है। इस पर लाभकारी बैक्टीरिया की प्रक्रिया करा कर आसवन-क्रिया द्वारा अलकोहल तथा अन्य नशीले पेय बनाने के बड़े-बड़े उद्योग स्थापित हैं। इसके श्वेतसार को भी अनेक उपयोगों के लिए पृथक् निकाल लिया जाता है।

---

## रद्दी से समृद्धि

पश्चिम जर्मनी में शहर की यांत्रिक सफाई का ऐसा नया सफल प्रयोग किया गया है जिसके फलस्वरूप न शहर में कूड़ा मिलेगा और न ही कूड़े में कूड़ा मिलेगा। इस नये प्रयोग में शहर भर का कचरा, कारखानों का मलबा, मनों रद्दी, नालियों, गटरों का मल, कीचड़···सभी कुछ मशीन के एक कक्ष में से गुजरता जायगा। उसमें लगा शक्तिशाली चुम्बक समस्त लोहे की रद्दी खींच लेगा। दूसरे कक्ष में सब कुछ पिसकर, घुल-मिलकर लुगदी जैसा बन जायगा। उसकी ईंटें बनाकर सुखा लेने पर उनमें से दुर्गन्ध भी अदृश्य हो जायगी। उन्हीं ईंटों को कृषि तथा बागबानी में पुनः चूर्ण बनाकर खाद को भी काम में लिया जा सकेगा।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# घातक रेडियो-विकिरण

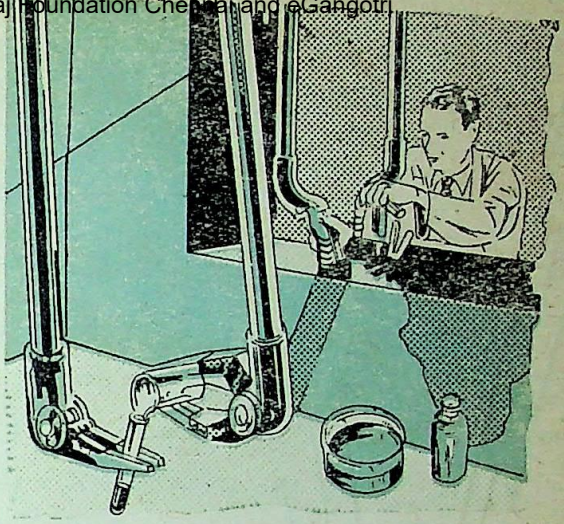

**एस. पी. मिश्र**

इस लेख के छपने के बहुत पूर्व ही शायद श्रीमती बी. का देहान्त हो चुका होगा और जब उनकी मृत्यु का प्रमाणपत्र पढ़ा जाएगा तो कारण में लिखा होगा, 'रेडियम-विष प्रयोग'। यों वह घटना घातक रेडियो विकिरण की घटनाओं में एक की वृद्धि करेगी।

बात प्रथम विश्वयुद्ध के आसपास की है। उन दिनों श्रीमती बी. न्यूजर्सी की एक रेडियम डायल रंगसाजी के कारखाने में ६ महीनों से कार्यरत थीं। वे रेडियम के घातक प्रभाव से अनभिज्ञ थीं। सदैव ही वे एक छोटे बर्तन में रखे रेडियम का अपने पेंटब्रुश से खुला उपयोग करती रहीं। एक रात फर्श पर रेडियम की हरी चमक से कारखाने के मैनेजर का ध्यान आकर्षित हुआ और उसने श्रीमती बी. से कहा कि उनकी लापरवाही से रेडियम फर्श पर बिखर गया है। श्रीमती बी. को कल्पना भी नहीं थी कि वही रेडियम उनकी हड्डियों तक पहुँच सकता है।

युद्धोपरान्त श्रीमती बी. ने एक अध्यापक से विवाह कर लिया था। कालान्तर में दो बच्चों का जन्म हुआ, जिनमें से एक अपने समय का प्रसिद्ध रेडियम वैज्ञानिक हुआ। विवाह के लगभग छः वर्ष पश्चात् श्रीमती बी. ने अपने जबड़ों में दर्द का अनुभव किया। वे कष्ट को बराबर सहती रहीं; फिर भी उन्हें कल्पना तक न हुई कि उन पर रेडिएशन का घातक आक्रमण हुआ है। कुछ मास पश्चात् शरीर में रेडियम और भी फैलता गया और एक दिन सीढ़ियाँ चढ़ते-चढ़ते बगैर किसी वस्तु की ठोकर लगे, उन्होंने अपनी जाँघ की हड्डी के चटखने का अनुभव किया। शरीर की परीक्षा द्वारा ज्ञात किया गया कि वह सूक्ष्म रेडियो-विकिरण का एक नया केस था।

### यह विषैला क्यों ?

विषैला कहलाने के लिए रेडियम की बहुत ही थोड़ी मात्रा पर्याप्त है। उदाहरणार्थ, सोडियम क्लोराइड (चूहामार विष) मानव-मृत्यु के लिए १ ग्राम चाहिए जब कि रेडियम के एक ग्राम का पाँच लाखवाँ भाग ही पर्याप्त है। रेडियम से तत्काल मृत्यु नहीं होती है। इसकी अल्फा किरणें अन्दर ही अन्दर हड्डियों को गलाकर बोन-कैंसर-



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(bone cancer) जैसा प्राणघातक रोग उत्पन्न करती हैं और रोगी धीरे-धीरे मृत्यु की ओर अग्रसर होता रहता है।

रेडियो-सक्रिय वस्तुएँ अल्फा (Alpha) तथा बीटा (Beta) नाम की दो विषैली किरणें विकीरित करती हैं। अल्फा किरणों द्वारा शरीर के अंग पर कोई क्षति नहीं पहुँचती; क्योंकि ये किरणें लगभग ५० माइक्रोन (१ माइक्रोन = $१०^{-६}$ मीटर) से अधिक अन्दर नहीं घुस पातीं। इसके विपरीत, बीटा किरणें काफी अन्दर तक प्रवेश करके अंगों को जला सकती हैं। जब रेडियो-सक्रिय वस्तु शरीर के अन्दर ले ली जाती है, तो दोनों ही किरणें प्रत्यक्ष हानि पहुँचा सकती है। भारी अल्फा किरणें बीटा किरणों की अपेक्षा अधिक हानिकारक होती हैं। यदि कोशिकाओं में स्वयं मरम्मत की क्षमता न हो तो इन किरणों के प्रभाव से वे निष्प्राण ही हो जाएँ अथवा कैंसर उत्पादक कोशिका उत्पन्न हो जाएँ।

### पहली मानवीय मौत

रेडियो-सक्रिय विष द्वारा पहली मानवीय मौत की रिपोर्ट सन् १९१२ की बैठक में दी गयी। उसके अनुसार एक ५८ वर्षीय वृद्धा जोड़ों के सूजन से पीड़ित थी। उसका इलाज थोरियम (रेडियम का एक आइसोटोप) के इंजेक्शन से हो रहा था। एक मास के अन्दर ही उसकी मृत्यु हो गयी। मृत्यु के समय उसमें विकिरण रोग, हेमरेएज तथा डायरिया के लक्षण पाये गये थे।

### ये किरणें अमृत भी हैं

इन्हीं किरणों का अमृत-रूप भी है। सन् १९१५ से १९३० के मध्य अमरीका के हजारों धनिकों ने रेडियम का किसी न किसी रूप में पान किया था। धनिक लोग ही उन रेडियोसक्रिय दवाओं के लिए धन खर्च कर सकते थे। रेडियम के पानी तथा

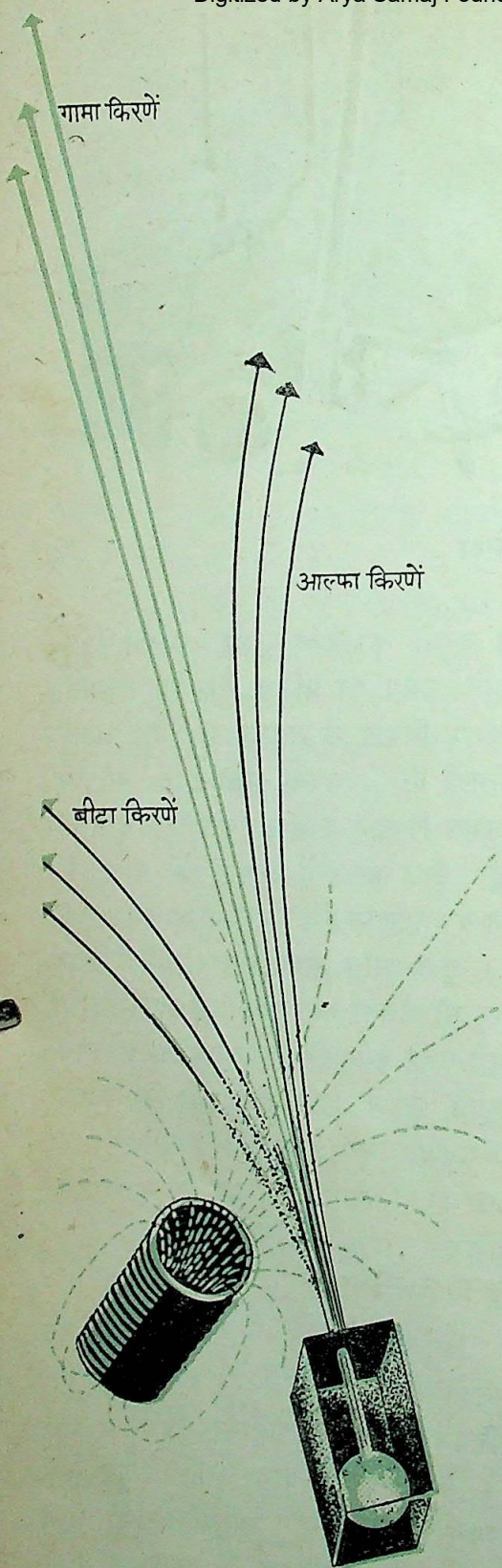


चुम्बक की सहायता से चौकोर बक्से में रखे रेडियम द्वारा विकीरित अल्फा, बीटा तथा गामा किरणों की उपस्थिति ज्ञात की जाती है


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

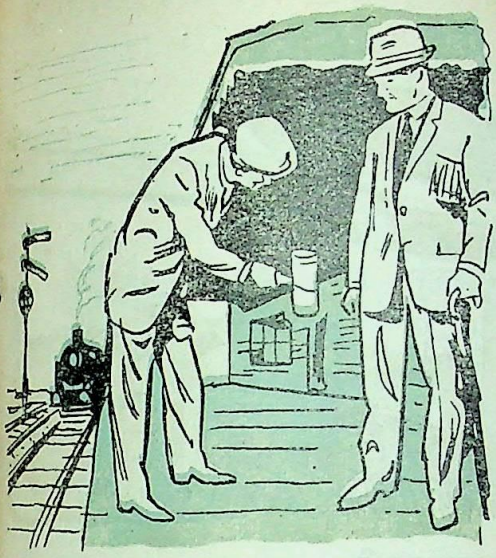

यात्री के वस्त्रों पर रेडियो-किरणों के प्रभाव का परीक्षण किया जा रहा है

इन्जेक्शन का उपयोग अधिकांश बीमारियों में किया गया था। एक चिकित्सक ने तो ५ हजार रोगों में रेडियम-साल्ट के इन्जेक्शन दिये थे! एक दुर्बल ५२ वर्षीय रोगी ने बताया कि उसने २ माइक्रोग्राम रेडियम युक्त २ औंस बोतल पानी प्रतिदिन के हिसाब से करीब ५ वर्षों तक लिया है, अर्थात् वह १४०० बोतल पानी (रेडियम युक्त) ले चुका था! उसकी पोस्टमार्टम रिपोर्ट से ज्ञात हुआ था कि उसके शरीर में ७४ माइक्रोग्राम रेडियम की मात्रा तब भी विद्यमान थी।

वैज्ञानिक लेखों में बराबर प्रकाशित होते रहते रेडियम के विषैलेपन के बावजूद सन् १९१६ में 'रेडियम' पत्रिका में रेडियम की प्रशंसा भी लिखी थी कि रेडियम से कोई विषैला प्रभाव नहीं होता। यह मनुष्य के लिए उसी प्रकार है जैसे पौधों के लिए सूर्य का प्रकाश। यह मत भी तत्पश्चात् दस वर्षों पूर्व ही खण्डित होने लगा; क्योंकि तब तक रेडियम-डायल रंगसाजी द्वारा रेडियम का विषैलापन प्रकाश में आ चुका था।

अनेक घटनाओं के उदाहरण से स्पष्ट है कि रेडियम का उपयोग मनुष्य के लिए घातक है। अतः रेडियो-सक्रिय वस्तुओं के उपयोग में सुरक्षा साधनों का प्रबन्ध अनिवार्यतः होना चाहिए।

साइकिल-सवार के भी परीक्षण की आवश्यकता है

---

## कूड़े से कमाई

अल्बाना, कैलिफोर्निया (अमरीका) के होटलों में अब मुर्गियों के परों के ढेर कूड़े की तरह पड़े हुए न मिला करेंगे। अब तक ऐसे ढेरों की सफाई एक सिरदर्द बना रहता था किन्तु वहाँ के कृषि-विभाग ने उसी सिरदर्द को अतुल कमाई का एक साधन बना दिया है। नयी योजनानुसार उन परों को साफ करके, प्रेशर-कुकर द्वारा भून कर, तत्पश्चात् पीस कर और उसमें प्रोटीन तथा अन्य पोषक पदार्थ मिला कर एक ऐसा उपयोगी खाद्य बनाया जाता है जो मुर्गियों, बत्तखों के नन्हे चूजों को पुष्टिकारक सिद्ध हुआ है। इस उद्योग से लाखों रुपये महीने की आमदनी होने लगी है।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

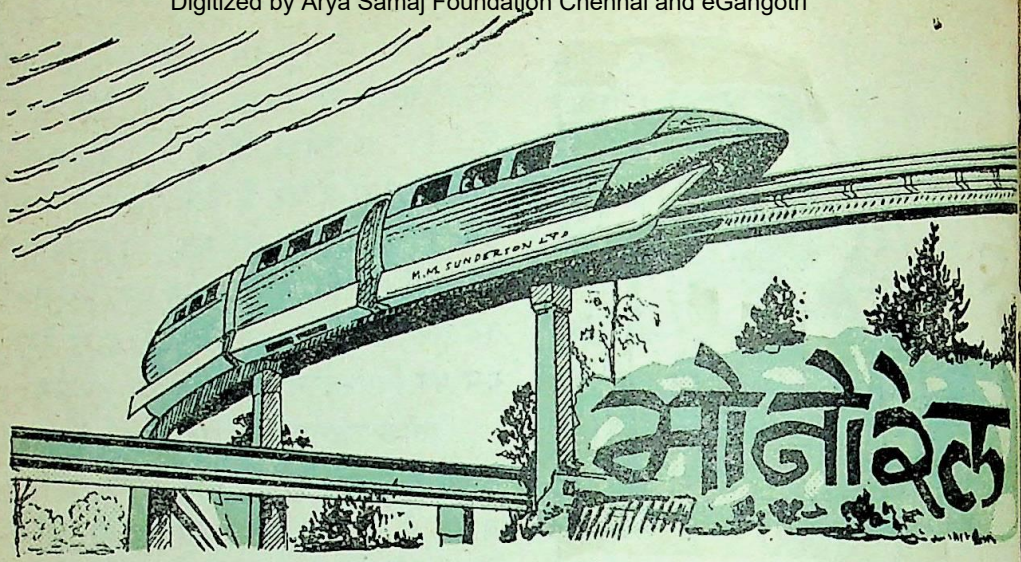


नरेन्द्रमोहन माहेश्वरी

मोनोरेल की सूझ नयी नहीं है। बड़े-बड़े कारखानों में इधर से उधर माल ढोने के लिए ऐसे छोटे वैगनों का उपयोग बहुत पहले से होता आया है। इन्हें यात्रियों के योग्य आकर्षक डब्बों का रूप देने की सूझ अवश्य इस शताब्दी के प्रारम्भ की है। कारखानों के अलावा धरती पर दौड़ने वाली रेलों के मुकाबले धरती से ऊपर, अधर ही अधर नन्हें आकर्षक कोच दौड़ाने के प्रयोगों की शृंखला १८८८ से चली आ रही है।

बड़े शहरों की गगनचुम्बी इमारतें, वाहनमार्गों की संकीर्णता, खुले स्थानों का अभाव और जीवन की चतुर्दिक् तीव्रतर गति के मध्य यातायात सम्बन्धी नित नयी आवश्यकताओं की पूर्ति एक बड़ी समस्या प्रस्तुत किये हुए है। अमरीका, इंगलैण्ड, फ्रांस, जर्मनी तथा जापान जैसे बड़े देश इस दिशा में वर्षों से प्रयत्नशील हैं और उन्होंने नयी रेलें बनाने के अनेक सफल प्रयोग किये भी हैं।

### ये धरती पर नहीं चलतीं

खुले स्थानों का तीव्र अभाव होने के कारण इनकी पटरियाँ ट्राम अथवा ट्रेन की भाँति धरती पर नहीं, खम्भों के आधार पर बिछायी जाती हैं। इनमें अधिक सुविधा दो पटरियों से ही होती है किन्तु दोनों पटरियाँ स्टील अथवा सीमेण्ट के एक ही शहतीर (beam) के अन्दर ढंकी रखी जाती हैं जिसके कारण वह शहतीर एक ही पटरी जैसी दिखती है इसीलिए इसे मोनोरेल कहते हैं।

इन रेलों को हलका तथा एल्यूमिनियम निर्मित १-२ डिब्बोंयुक्त बनाया जाता है। ६०-७० यात्रियों को लिये हुए ये हलकी रेलें ४०-५० कि. मी. प्रति घण्टे के वेग से व्यस्त मार्गों के ऊपर ही ऊपर सरसराती रहती हैं और दिन भर में ५०-६० हजार यात्रियों को लाती, ले जाती हैं। इन रेलों के भी दो भिन्न प्रकार हैं: एक तो वे जो पटरी के ऊपर चलती हैं और दूसरी वे जो पटरी से लटके हुए चलती हैं।

### दोनों का रचना-भेद

पटरी के ऊपर चलने वाली रेलों में संतुलन की समस्या प्रमुख थी। प्रारम्भिक प्रयोग स्वरूप जब एक गाय को उसमें बिठाकर ले जाया गया तब संतुलन के लिए दूसरी ओर दो बछड़ों को भी साथ में ले जाना पड़ा। गाय को निर्दिष्ट स्थान पर उतार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर वापसी यात्रा में दोनों बछड़ों को सीधा और आमने-सामने खड़ा करके लाया गया। इस आधार पर संतुलन के लिए स्थिरक यंत्र (जाइरोस्कोप) का प्रयोग किया गया। यह प्रयोग काफी सफल रहा और लम्बे समय तक प्रचलित भी रहा। जब जाइरोस्कोप बन्द पड़ जाने पर संतुलन बिगड़ जाता था तो एक समस्या बन जाती थी। अतः स्थिरकयंत्र भी हटा दिया गया और उसके स्थान पर शहतीर के दोनों ओर दो अतिरिक्त पहिये लगाकर समस्या को हल किया गया।

इनकी अपेक्षा पटरी से लटकने वाली रेलें अधिक सुरक्षित पायी गयीं। इनके पहिये जिन पटरियों से सटे रहते हैं वे पटरियाँ शहतीर में बन्द रहती हैं। इसका प्रसिद्ध एल्वेग (Alweg) डिजाइन बनाने का श्रेय स्वीडिश मेकेनिक एक्सेल वेनर ग्रेन (Axel Wenner Gren) को है जिसके नाम का संक्षिप्त शब्द ही एल्वेग है। यह रेल अपने हवा भरे टायरों युक्त पहियों के सहारे शहतीर से लटकती हुई चलती है और दोनों ओर के अतिरिक्त पहिये शहतीर को मजबूती से पकड़े रहते हैं। लगभग एक ही किलोमीटर की इसकी प्रायोगिक दौड़ ६० कि. मी. प्रति घण्टे के वेग की रही थी।

मोनोरेल को और भी लोकप्रिय बनाने के प्रयास बराबर जारी हैं। एक शहर से दूसरे शहर को इनके द्वारा जोड़ने का प्रश्न तो बहुत दूर है। अभी तो शहरों में ही इनके विकास पर बल दिया जा रहा है। इनके लिए बीच-बीच में स्टेशन, प्लेटफार्म आदि भी रखना आवश्यक होता है। वे स्टेशन भी खम्भों के सहारे अधर ही बनाये जाते हैं। वहाँ भी स्थान की कमी के कारण अधिक चौड़ी जगह नहीं मिल सकती। इसलिए रेल से उतरते समय सँकरे प्लेटफार्म से गिरने जैसी कोई दुर्घटना न हो इसकी बड़ी सावधानी रखनी पड़ती है। इसके लिए सर्कस जैसा एक मजबूत जाल स्टेशन से जरा ही नीचा उस समय फैला दिया जाता है जब गाड़ी रुकने को होती है। इससे यह लाभ रहता है कि संयोगवश यदि कोई व्यक्ति अथवा वस्तु प्लेटफार्म से गिर भी जाए तो जाल में अटकी रहे और नीचे चल रहे यातायात के कारण कोई संकट उपस्थित न हो। इसी प्रकार यदि बीच ही में बगैर स्टेशन के उतरना पड़ जाए तो एक सुरक्षा-सीढ़ी की भी

**दो भिन्न प्रकार से (१, २ पटरी से लटक कर) तथा (३, ४ पटरी के ऊपर) चलने वाली मोनोरेलें। इनमें भी पारस्परिक अन्तर है १. एक ही पटरी वाली २. दोहरी पटरी वाली; ३. जाइरोस्कोप द्वारा सन्तुलन ४. जाइरोस्कोप का काम दोनों ओर के पहियों से लिया जाता है**

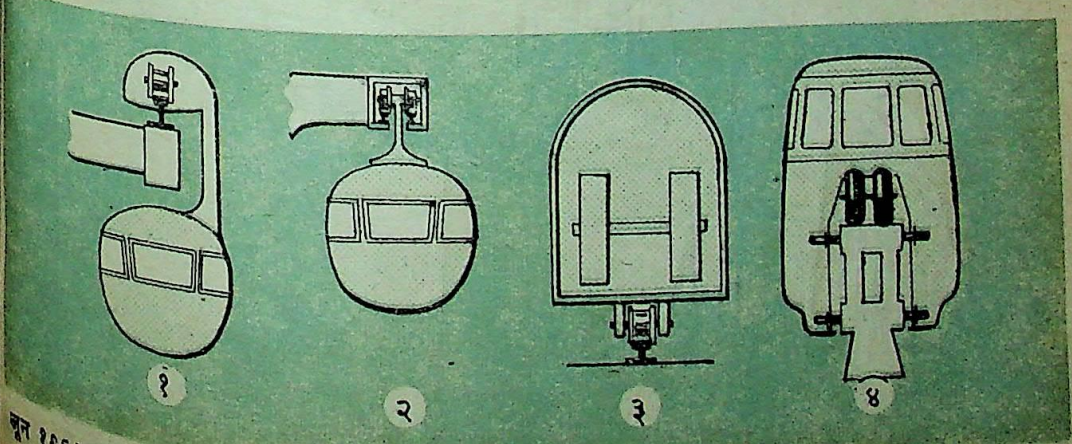




CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यवस्था रहती है जिसके सहारे नीचे उतरा जा सके।

### मोनोरेल का भविष्य

ऊपर कहा गया है कि मोनोरेल द्वारा एक शहर को दूसरे शहर से जोड़ने का प्रश्न अभी काफी दूर है। व्यावसायिक दृष्टि से भी वह लाभप्रद सिद्ध न होगी क्योंकि इसकी प्रति कि. मी. की औसत लागत भूमिगत पटरियों से कहीं अधिक बैठती है। यह केवल उपनगरीय ट्रेनों तथा बसों की भाँति ४०-५० कि. मी. की दूरियाँ जोड़ने के लिए ही सुविधाजनक रहेगी। सँकरे मोड़ भी यह सरलता से घूम लेती है। पटरी से उतरने की कोई सम्भावना इसमें नहीं रहने दी जाती। दैनिक व्यवहार में ४०-५० कि.मी. प्रति घण्टे इसकी रफ्तार उत्तम मानी जाती है।

सरसराती चली जा रही मोनोरेल सामान्य रेलों जैसा शोरगुल भी नहीं करती। धरती से ऊपर ही ऊपर चलने वाली मोनोरेल की लोकप्रियता बढ़ने की सम्भावना बहुत हैं। इसका भविष्य अत्यन्त उज्जवल है। सब प्रकार से सुरक्षित, सुखदायक और तीव्रगामी होने के लिए इसे अभी और साहस तथा धैर्य की आवश्यकता है। आने वाले अधिकाधिक व्यस्त जीवन के लिए निस्सन्देह मोनोरेल आधुनिक विज्ञान की बहुत बड़ी देन सिद्ध होगी।

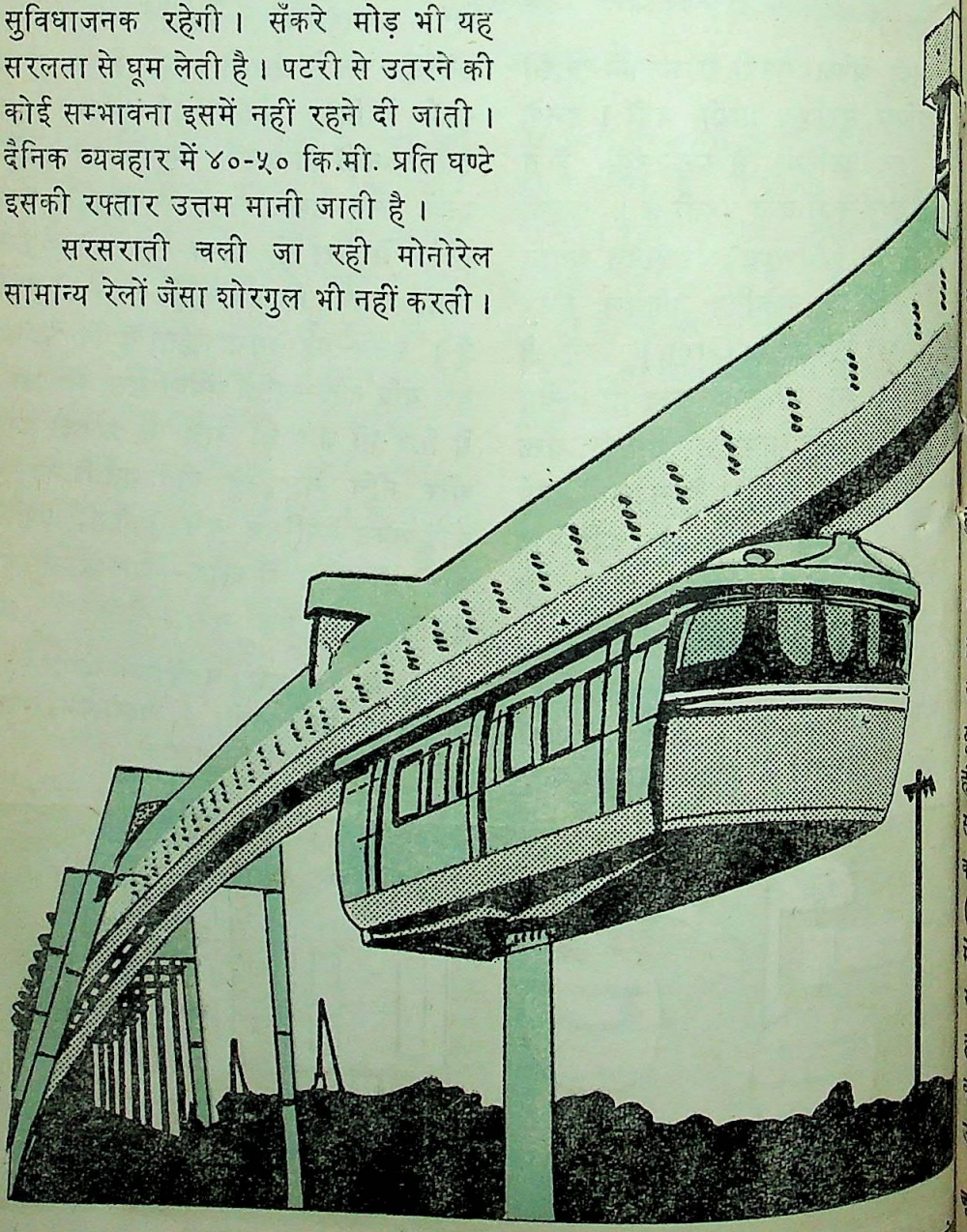



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

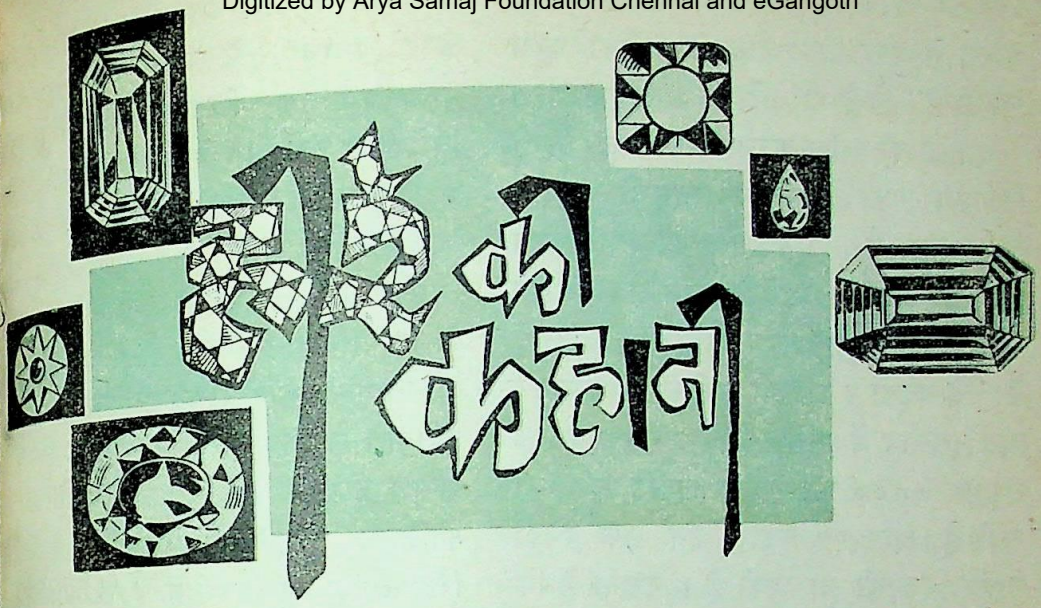


**विनोदकुमार सक्सेना**

कार्बन जैसी एक अति नगण्य और बहुप्राप्य वस्तु से हीरे जैसी अद्भुत और दुष्प्राप्य वस्तु बना देना प्रकृति के ही लिए सम्भव है। यद्यपि वर्षों के अनवरत प्रयासों तथा लाखों की लागत से यांत्रिक साधनों द्वारा अमरीका की जनरल इलेक्ट्रिक कम्पनी (GEC) कृत्रिम हीरा बनाने में सफल हुई है।

आभूषणों के क्षेत्र में हीरे को रतन, मणि, लाल, गौहर, कुछ भी कह लीजिए। हीरे को डायमण्ड (diamond) नाम दिये जाने का भी एक इतिहास है। प्राचीन यूनान के लोग हीरे से परिचित तो थे नहीं। हीरे के पश्चात् द्वितीय स्थान पर तत्कालीन सबसे अधिक कठोर खनिज पदार्थ चमकीले कोरुण्डम (corundum) को वे एडेमास (adamas) कहते थे। भारत इस विषय में प्रारम्भ से ही अग्रणी रहा है। रोमन साहित्यकारों ने भारत की नदियों में प्रायः ही बहकर किनारे आने वाले कठोर मणियों को एडमण्ट (adamant) भी कहा है। उसी adamant शब्द का अपभ्रंश होते-होते diamount अन्ततः diamant पर आकर ठहर गया।

### हीरे की खोज में

१९वीं शताब्दी के मध्य तक हीरा प्राप्त होने वाले देशों में ब्राजील का नाम भारत से जोड़ा जाता था। १८६६ में दक्षिणी अफ्रीका का हीरे से सर्वप्रथम परिचय तब हुआ जब एक बालक को चमकीले पत्थर से खेलते हुए देखा गया। वह पत्थर हीरा ही था। उस अबोध बालक के लिए हीरा एक रंगीन चमकीले पत्थर अथवा काँच के अतिरिक्त कुछ नहीं था। आज हीरा-उत्पादन में अफ्रीका का प्रथम स्थान है।

ज्वालामुखी क्षेत्र ही प्रकृति के अधिकांश हीरा-उत्पादक स्थल हैं। अनन्त काल से भूगर्भ में बनते चले आ रहे नन्हे-मोटे हीरे एक स्थल पर रह भी नहीं पाते। जहाँ किसी ज्वालामुखी का विस्फोट हुआ, उसके तप्त, तरल लावा का कुछ भाग पृथ्वी के अन्तराल में अन्दर ही अन्दर एक महाद्वीप से दूसरे महाद्वीप तक पहुँच गया। भारत में पाया जाने वाला हीरा न जाने किस



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्वालामुखी की मट्टी में बना होगा। ऐसे ही भारत में बना हीरा दक्षिणी अफ्रीका पहुँच सकता है तो कभी दक्षिणी अमरीका भी।

हीरे की खोज करने वाला दल किसी निष्क्रिय तथा शान्त ज्वालामुखी का क्षेत्र चुन लेता है। ऐसे दल को प्रास्पेक्टर्स (prospectors) कहते हैं। उन क्षेत्रों में तंग और गहरे गड्ढे पाइप्स (pipes) कहलाते हैं। ऐसे गड्ढों में दक्षिणी अफ्रीका के किम्बरले पाइप संसार में प्रसिद्ध हैं। उनमें अब तक लगभग ३००० फुट गहरी खुदाई की जा चुकी है और २५ करोड़ टन तक मिट्टी बाहर निकाली जा चुकी है। गणना है कि उसकी प्रति ५००० टन मिट्टी से केवल १२ औंस हीरा प्राप्त होता रहा है। उस मिट्टी को ब्लू ग्राउण्ड (blue ground) कहते हैं। हीरा कितना दुष्प्राप्य और अनमोल है, यह इसी से स्पष्ट है कि २५० वैगनभरी ५००० टन ब्लू ग्राउण्ड से केवल १२ औंस हीरा प्राप्त होता है।

### विभिन्न किस्में

हीरे की चार प्रमुख किस्में हैं : विशिष्ट, बोर्ट (Boart), बैलस (Ballas) और कार्बनेडो (Carbonado)। विशिष्ट हीरा सुगठित, पूर्ण स्फटिक, पारदर्शी और बहुमूल्य होता है। आभूषणों में यही काम आता है। शेष तीनों किस्में कठोरता में तो विशिष्ट हीरे जैसी ही होती हैं किन्तु रंग में बदरंग, कुछ हलकी, कुछ गहरी, टेढ़ी-मेढ़ी भी होती हैं। अतः वे आभूषणों में काम नहीं आतीं। उनका उपयोग औजारों और यंत्रोद्योग में होता है। खान से निकलने वाले हीरों में अधिक मात्रा इन्हीं घटिया रत्नों की होती है। लगभग पौन से भी अधिक मात्रा में निकलने वाले इन हीरों का उपयोग विभिन्न उद्योगों में होता है और अत्यन्त अल्प मात्रा में पाये जाने वाले हीरे आभूषणों के काम आते हैं। हीरे का भा कैरट (carat) में मापा जाता है। कु समय पूर्व तक कैरट के माप में का विभिन्नता रही होने से अनेक प्रसिद्ध हीरों भारों में आज भिन्नता प्रतीत होती है। अब एक कैरट की माप ०·२०० ग्राम अर्थात् २ मिलीग्राम संसार भर में मानी जाने लगी है

### संसार-प्रसिद्ध हीरे

अनेक संसार-प्रसिद्ध हीरों के साथ रो इतिहास जुड़े हुए हैं। निम्नांकित नाम कु प्रसिद्ध हीरों के हैं : कलिनन (Cullinan कोहिनूर (Kohinoor), आरला (Orloff), अकबरशाह (Akbarshah)

विभिन्न पहलुओं पर जगमगाते हीरे

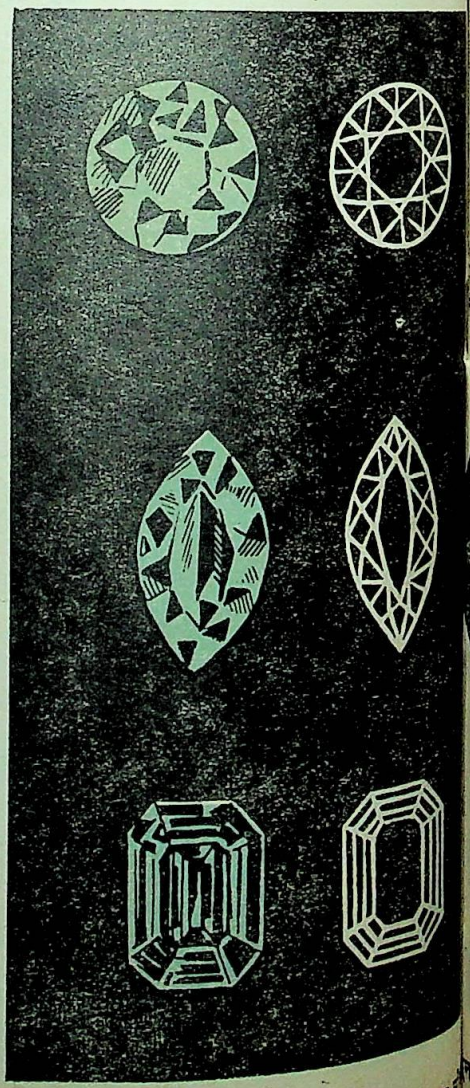



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्रेट मुगल (Great Mogul), रीजेण्ट (Regent), डडले (Dudley) तथा स्टार आफ दि साउथ (Star of the South)।

कलिनन १९०५ में दक्षिणी अफ्रीका की प्रीमियर खान में पाया गया था। यह आज सबसे बड़ा हीरा है। इसका मूल भार ३१०६ कैरट (लगभग १½ पौण्ड) था। सर्वप्रथम यह ब्रिटिश सम्राट एडवर्ड सप्तम को भेंट किया गया था। तत्पश्चात् इसे काट सँवारकर ९ खण्डों में किया गया जिनमें से ४ बड़े खण्ड ब्रिटिश राजमुकुट की शोभा बढ़ा रहे हैं।

कोहिनूर के अस्तित्व का १३०४ से पूर्व कोई उल्लेख नहीं मिलता। इस हीरे के साथ अनेक रक्तरंजित इतिहास जुड़े हैं। ५००-६०० वर्षों के मध्य अनेक हाथों से गुजरता हुआ यह हीरा अन्ततः ब्रिटिश सम्राट के अधीन १८४९ में पहुँच गया। अनुमान है कि १३०४ में मालवा के राजा से सुलतान अलाउद्दीन ने इसे प्राप्त किया था। उन दिनों इसका भार १९१ कैरट था जो अब १८८ कैरट रह गया है। यह हीरा ब्रिटिश साम्राज्ञी के मुकुट का सिरमौर नगीना है।

आरलाफ हीरा किसी मूर्ति के नेत्रों से एक फ्रेंच सैनिक द्वारा चुराया गया था। लगभग २०० कैरट के उस हीरे को उसने प्रिन्स आरलाफ के हाथों १।। लाख रुपये में बेच दिया था। प्रिन्स ने उसे रूस की तत्कालीन साम्राज्ञी कैथेरीन को भेंट कर दिया था।

अकबरशाह हीरा प्रारम्भ में ११६ कैरट का था। इस पर अरबी लिपि में शाह अकबर और शाहे दो आलम नामक मुद्रांकन हो रहे थे जो क्रमशः १६५० और १६६१ के काल के माने जाते हैं। १८६६ में इसे लन्दन ले जाकर तराशा गया और नये आकार में ७१·७ कैरट भार का बनाकर भारत के महाराजा गायकवाड़ को सात लाख रुपये में बेच दिया गया।

ग्रेट मुगल हीरा ७८·७ कैरट भार का था। १६५० में इसे गोलकुण्डा खान से प्राप्त किया गया था। १६६५ में एक फ्रेंच यात्री ने इसे मुगल सम्राट औरंगजेब के खजाने में देखा था।

रीजेण्ट हीरा भारत से प्राप्त बड़े हीरों की अन्तिम शृंखला में माना जाता है। १७०१ में जब इसे प्राप्त किया गया, तब इसका भार ४१० कैरट था। मद्रास के तत्कालीन गवर्नर थामस पिट ने इसे चार लाख रुपये में खरीदा था। तत्पश्चात् इसे काट-छाँटकर तथा सजा-सँवारकर १४०·५ कैरट भार का बना दिया गया। इसे फ्रांस के रीजेण्ट, ड्यूक आफ ओरलियन्स के हाथ बेच दिया गया। वहाँ एक बार तो यह अन्य हीरों के साथ चुरा लिया गया किन्तु तुरन्त खोज भी लिया गया। इस हीरे को जमानत के रूप में

संसार के सबसे बड़े हीरे 'कलिनन'—काट-छाँट कर संवार कर बनाये गए अनेक नगीनों में से एक बड़ा नगीना

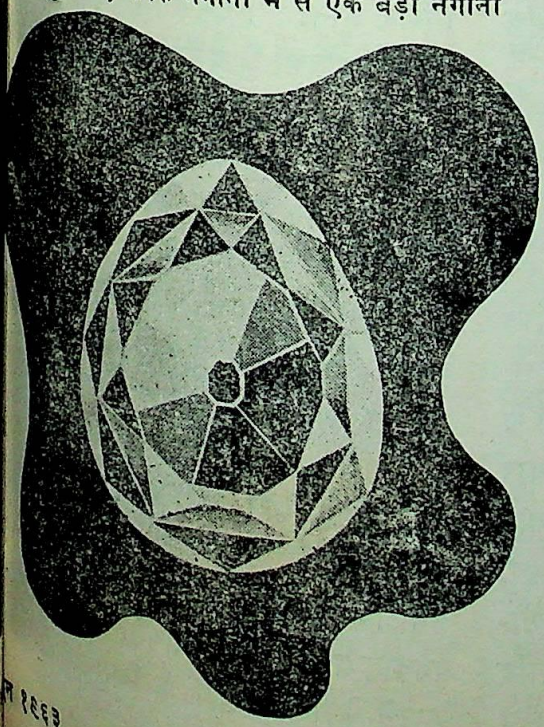

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रखकर नेपोलियन को सहायता प्राप्त करने में बड़ी मदद मिली थी।

प्रेसीडेण्ट वारगस तथा स्टार आफ दि साउथ दक्षिणी अमरीका के ब्राजील प्रदेश में पाये जाने वाले हीरों में सबसे प्रसिद्ध हैं। ७२६ कैरट का वारगस हीरा १९३८ में एक निर्धन राहगीर ने पाया था। उसने इसे एक दलाल के हाथ केवल ४० हजार रुपये में बेच दिया। उस दलाल ने उसे बयालीस गुना अधिक मूल्य में एक निर्यात व्यापारी को बेच दिया।

**प्रमुख प्राप्ति-स्रोत**

संसार में केवल तीन ही देशों से हीरा प्राप्त होता है। कालक्रम के अनुसार भारत प्रथम स्थान पर है जहाँ प्राचीन काल से हीरा प्राप्त किया जा रहा है। द्वितीय स्थान दक्षिणी अमरीका का है जहाँ १८वीं शताब्दी से हीरा प्राप्त होने लगा है। शेषतः दक्षिणी अफ्रीका में यद्यपि यह अत्यधिक विलम्ब से (१८७०) प्राप्त किया जाने लगा है, तथापि उत्पादन की दृष्टि से आज यह सर्वोपरि है। विगत १०-१२ वर्षों से वहाँ का वार्षिक हीरक उत्पादन दो करोड़ कैरट तक पहुँच चुका है।

भारत में मद्रास, मध्य प्रदेश, उड़ीसा तथा पश्चिमी बंगाल हीरक उत्पादन में प्रमुख हैं। इनमें भी मध्य प्रदेश के पन्ना जिले में भुजगावन क्षेत्र से हीरे की सर्वाधिक (लगभग ९५%) मात्रा प्राप्त होती है। दक्षिणी अमरीका में यह ब्राजील, ब्रिटिश गाइना तथा वेनेज्युएला प्रदेशों से प्राप्त होता है। दक्षिणी अफ्रीका से संसार भर का ९७% हीरा प्राप्त होता है। वहाँ मुख्यतः यूनियन आफ साउथ अफ्रीका, बेल्जियन कांगो, घाना, अंगोला, दक्षिणी-पश्चिमी अफ्रीका तथा टांगानिका आदि प्रदेशों से हीरा प्राप्त होता है। टांगानिका

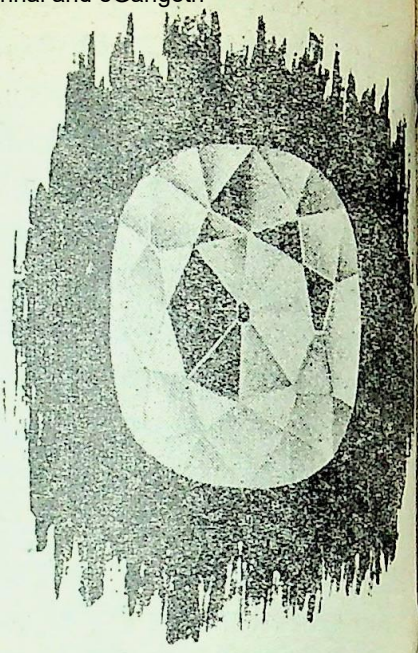

संसार-प्रसिद्ध हीरा कोहेनूर

की खान १९४१ में पायी गयी थी। य
हीरे की सबसे बड़ी खान मानी जाती है

**अँधेरी खान से आभूषण तक**

खान से निकला हीरा जितना बेडौ
और अनाकर्षक होता है, नगीने के रूप
उतना ही आबदार और आकर्षक रूप
निखर आता है। इसके लिए इसे निम्न
प्रमुख क्रियाओं से गुजरना पड़ता है: विद
(cleavage), कटाई (cutting), पा
(polishing) तथा जड़ाई (setting
इनमें विदरण अर्थात् विदीर्ण करने, छी
की क्रिया में बड़ी दक्षता की आवश्यक
यह सावधानी रखनी पड़ती है कि प्राप्त
के एक ब्लाक में से बड़े से बड़ा स्फ
सँवारा जा सके। कुशल निरीक्षक
निरीक्षण द्वारा सर्वप्रथम यह देखते हैं कि
को उसके रेशों की सीध में ही
जाए। तभी रवा सफाई से कट सके
इस प्रकार चारों ओर से ठीक कर लेने
पश्चात् अपेक्षित पहल अर्थात् पार्श्व (face
काटने के लिए रेशों के विपरीत भी


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

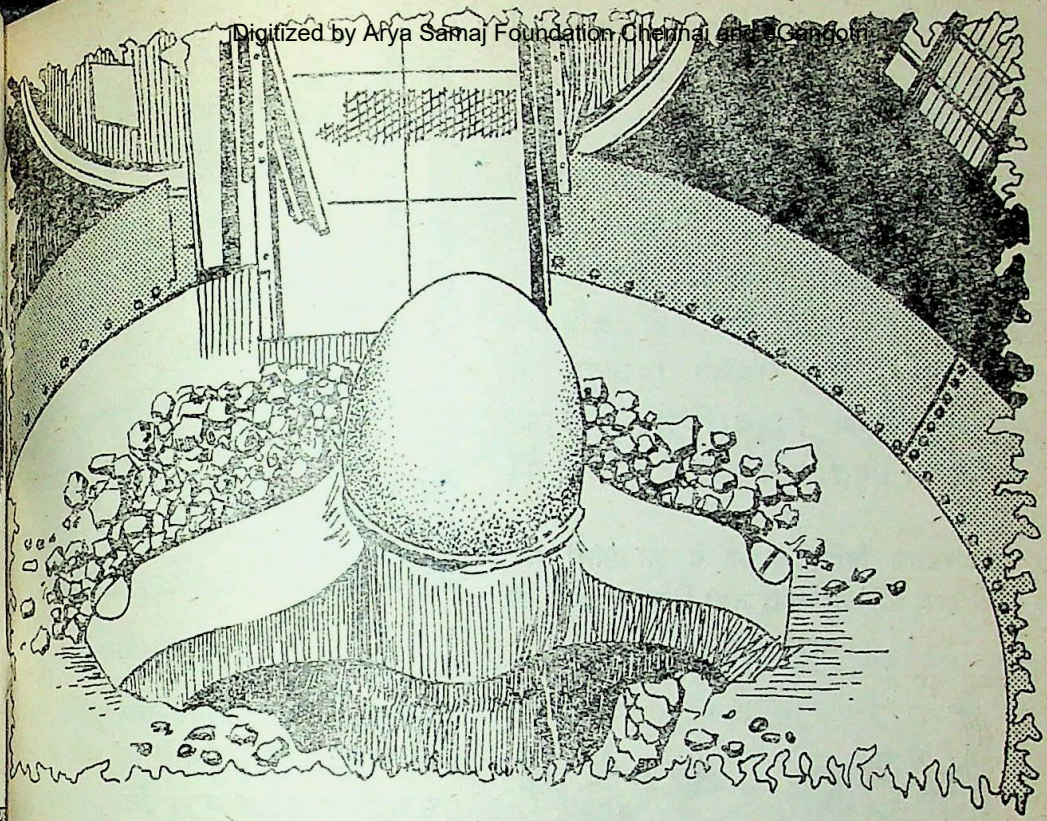

खान से निकली हुई मिट्टी ब्लूग्राउण्ड इस रोलर से गुजरती है और छोटे-मोटे हीरे अलग होते जाते हैं

करने की आवश्यकता पड़ जाती है। उसके लिए फास्फोर ब्रान्ज (phosphor bronze) की बनी एक छोटी-सी गोल आरी से काम लेना पड़ता है। उस आरी के दाँतों पर हीरक-रज (diamond-dust) का ओलिव आयल से लेप चढ़ाना पड़ता है, क्योंकि हीरे को हीरा ही काट सकता है।

इसी प्रकार विदरण की प्रारम्भिक क्रिया में भी हीरे की नोक से निशान तथा खरोंच लगाकर ही कटाई की जाती है। इस क्रिया में धैर्य की आवश्यकता होती है क्योंकि कभी-कभी तो एक ही रवे को काटने में हफ्तों लग जाते हैं। यदि किसी रवे को गोलाकार बनाना हो तो वह भी इसी क्रिया के अन्तर्गत खराद मशीन पर हीरे की कनी की सहायता से गोल कर लिया जाता है।

पालिशिंग की क्रिया इस उद्योग का प्राण है। इसमें भी ओलिव आयल मिश्रित हीरज-रज काम में लायी जाती है। वह रज दो पहियों के बीच लेप के रूप में चढ़ा दी जाती है। पहियों की गति कभी-कभी २००० चक्कर प्रति मिनट तक भी कर देनी पड़ती है। उन पहियों को स्काइव्ज (skives) कहते हैं। हीरे को डाप (dop) नामक एक होल्डर में फिट करके घिसाई के लिए इन पहियों के निकट जमाया जाता है। इस क्रिया में एक के बाद दूसरा करते-करते जितने अधिक पहल (पार्श्व) तैयार होते हैं, उतनी ही इसकी आभा और चमक-दमक बढ़ती है। सामान्यतः कम से कम ५७ पहलवाला हीरा उत्तम माना जाता है।

**आभूषणों में कम, उद्योगों में अधिक**

हीरे की बहुमूल्यता के कारण आभूषणों में तो इसका उपयोग अत्यन्त सीमित तथा अल्प है। अत्यधिक धनी व्यक्ति ही इसका शौक कर सकते हैं। हीरक-उत्पादन का चौथाई से भी कम भाग आभूषणों के काम आता है। इसका बहुत बड़ा भाग उद्योगों



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में खपता है। इंजीनियरिंग के लिए कटाई, तथा छिदाई के विशिष्ट औजार हीरे की नोक के ही बनाने पड़ते हैं। हीरा अकाट्य पदार्थ है। अतः हीरे की नोकयुक्त औजार कड़ी से कड़ी धातु को काटने में समर्थ है। प्रारम्भ में गिनायी गयी इसकी चार जातियों में से बोर्ट जाति ही अधिकतः काम आती है। द्वितीय विश्वयुद्ध में मित्र-राष्ट्रों को विजय दिलाने में हीरक-उद्योग का प्रमुख हाथ रहा है। इसी की

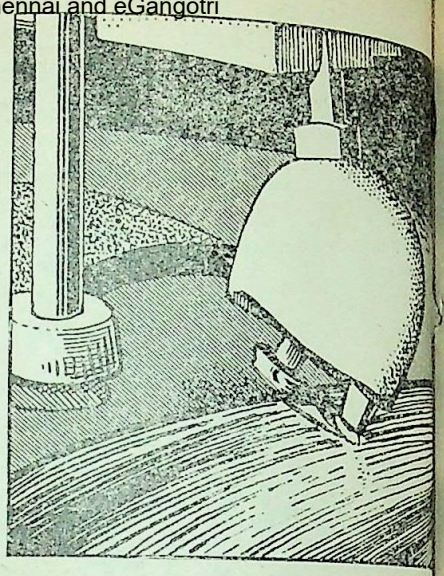

हीरे की पालिशिंग

फास्फोरब्रान्ज निर्मित, कागज से भी पतली गोल आरी द्वारा हीरे की कटाई तथा विभिन्न पहलों की कटाई होती है

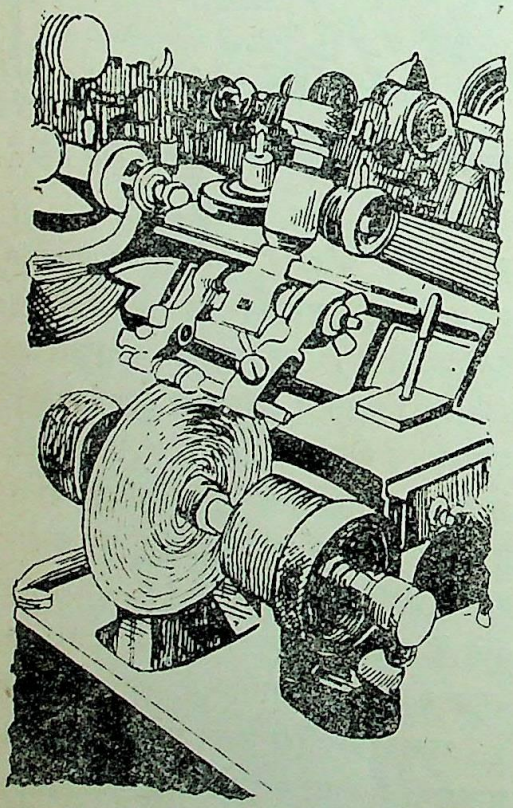

सहायता से युद्धोपयोगी यन्त्र आदि तत्पर और सरलतापूर्वक बनाये जा सके थे। ह पर आश्रित कुछेक मुख्य उद्योग निम्न प्रक गिनाये जा सकते हैं: १. चश्मे तथा दू दर्शियों के लेंस के पालिशिंग में; २. बारी तार खीचने की डाइयाँ बनाने में; ३. भव निर्माण के लिए पत्थर के विशाल स्त काटने में; भूमि तथा सुरंगों की खु में और ५. सानचक्र (emrywhee बनाने में।

मनुष्य को प्रकृति की सबसे मूल्यव देन हीरा है। लाखों वर्षों से पृथ्वी अन्तराल में, उसकी अनन्त गहराइयों जिन विधियों से प्रकृति हीरे का निर्म करती आयी है, उसकी नकल करना समानगुणी हीरा बना लेना मनुष्य के लि अभी तक सम्भव नहीं हो पाया है।

## पाँच मंजिल का आतिशबाजी स्तूप

न्यूयार्क की मोबिलकलर कार्पोरेशन कम्पनी ने एक ऐसा इलेक्ट्रानिक आतिशबाजी का टा बनाया है जो पाँच मंजिलों तक विभिन्न आधुनिक आतिशबाजी तथा रंग-बिरंगे राकेटों से सज्जित है पूरे छः मिनट तक आतिशबाजी का एक दौर चलता है, तब दूसरा प्रारम्भ होता है। उस आक रंग-रंगीली आतिशबाजी के साथ ही टेप-रिकार्डिंग किया हुआ संगीत भी चलता है।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# अन्तरिक्ष उड़ान और वैज्ञानिक अनुसंधान

रेमण्ड एल. बिस्पलिंगोफ

१९५६ में अमरीका की सरकार ने वैज्ञानिक अनुसन्धान एवं विकास कार्यों पर ३ अरब ५० करोड़ डालर की धन-राशि व्यय की थी। आज १९६३ में इन कार्यों पर होने वाले वार्षिक व्यय का अनुमान १२ अरब ५० करोड़ तक पहुँच चुका है।

वैज्ञानिक अनुसन्धान एवं विकास कार्यों पर सात वर्षों में ८ अरब डालर की जो वृद्धि हुई है, उसका आधे से अधिक भाग अन्तरिक्ष अनुसन्धान कार्यों पर व्यय हो रहा है। इनके लिए निर्धारित धन-राशि में से अधिकांश का उपयोग राष्ट्रीय अन्तरिक्ष प्रशासन (NESA) द्वारा किया जा रहा है। शेष धन परमाणुशक्ति कमीशन, प्रतिरक्षा विभाग, मौसम ब्यूरो तथा राष्ट्रीय विज्ञान प्रतिष्ठान खर्च कर रहे हैं।

'नेसा' का मुख्य कार्य पृथ्वी की कक्षागत परिक्रमा करने वाले उपग्रह छोड़ना, अन्तरिक्ष में विद्यमान परिस्थितियों के बारे में अनुसन्धान करना तथा समानव अन्तरिक्ष उड़ानों के लिए प्रयास करना है। समानव अन्तरिक्ष उड़ानों के क्षेत्र में 'प्रोजेक्ट मर्करी' के अन्तर्गत उल्लेखनीय सफलताएँ प्राप्त की जा चुकी हैं। अब, प्रोजेक्ट एपॉलो के अन्तर्गत समानव चन्द्र-यात्रा को सम्भव कर दिखाने के लिए 'नेसा' प्रयत्नशील है। आशा है कि इस दशाब्दि के अन्त तक अमरीका चन्द्रमा पर मनुष्य को उतारने और उसे सकुशल पृथ्वी पर वापस लाने में सफल हो जाएगा।

'नेसा' इसके अतिरिक्त एक और भी कार्य कर रहा है, जिसके बारे में लोगों को कम जानकारी है। यह कार्य है विज्ञान के क्षेत्र में और भी अधिक उच्चकोटि का अनुसन्धान।

प्रश्न उठता है कि इस प्रकार के वैज्ञानिक अनुसन्धान की क्या आवश्यकता है? वास्तविकता यह है कि किसी भी टैक्नालोजी के दो पहलू होते हैं—एक आधारभूत अनुसन्धान और दूसरा आधारभूत अनुसन्धान से प्राप्त जानकारी का मानव-कल्याण के लिए व्यावहारिक उपयोग। आज 'नेसा' अन्तरिक्ष में उपग्रह प्रक्षिप्त करने और समानव उड़ानें भरने के लिए जो प्रयास और परीक्षण कर रहा है, वे वस्तुतः भूतकाल में वैज्ञानिकों द्वारा किये गए सैद्धान्तिक अनुसन्धान और मनन पर आधारित हैं।

यदि आगामी दशाब्दि (१९७०-८०) में



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अमरीका को उड्डयन एवं अन्तरिक्ष विज्ञान के क्षेत्र में प्रगति करनी है तो उसे इन वर्षों (१९६०-७०) में संचालन शक्ति, ईंधन, धातुएँ, नियन्त्रण और पथ-निर्देशन प्रणालियाँ, संचार-प्रणाली, अन्तरिक्ष-विज्ञान और अन्तरिक्ष में विद्यमान परिस्थितियों के बारे में वैज्ञानिक अनुसंधान का कार्य पूरी क्षमता से जारी रखना पड़ेगा।

इन क्षेत्रों में सबसे कठिन चुनौती का सामना वैज्ञानिकों को शक्ति-संचालन एवं परिवर्तन के क्षेत्र में करना पड़ रहा है।

आधुनिक उड्डयन विज्ञान और अन्तरिक्ष वाहन सम्बन्धी विज्ञान के क्षेत्र में हमारी रुचि केवल दो प्रकार के शक्ति-परिवर्तकों में है—पहली, वह संचालन प्रणाली, जो धक्का देने की शक्ति प्रदान करती है, दूसरी वह जो अन्तरिक्ष में विचरण कर रहे अन्तरिक्ष यान को शक्ति सुलभ कराती है। इन शक्तियों में रसायन शक्ति, सौर-शक्ति तथा परमाणु-शक्ति मुख्य हैं। अमरीका के अन्तरिक्ष अनुसन्धान कार्यक्रम में इन शक्तियों के बारे में विस्तृत अनुसन्धान किया जा रहा है।

आज के विशालतम राकेटों में द्रव-आक्सीजन और मिट्टी का तेल ईंधन के रूप में प्रयुक्त होते हैं। इनके लिए अधिक शक्तिशाली रासायनिक ईंधनों की खोज करने पर विशेष ध्यान केन्द्रित किया जा रहा है।

यह अनुभव किया जा रहा है कि राकेट के ऊपरी खण्डों के अधिक विश्वसनीय संचालन के लिए परमाणुशक्ति सर्वाधिक उपयुक्त होगी। अतः परमाणुशक्ति चालित राकेटों के निर्माण पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। ३० नवम्बर, १९६२ को नेवादा के परीक्षण स्थल पर एक आणविक राकेट इंजन का भूमि पर सफल परीक्षण भी किया जा चुका है। कुछ वर्षों में आकाश में परमाणुशक्ति संचालित राकेट का प्रथम परीक्षण होने वाला है।

अमरीका के अन्तरिक्ष-कार्यक्रम में संचालन-शक्ति के रूप में विद्युतशक्ति का उपयोग करने की सम्भावना को भी बहुत अधिक महत्त्व प्रदान किया जा रहा है। इस प्रकार की प्रणालियों का वजन २० पौण्ड प्रति किलोवाट से अधिक नहीं होना चाहिए। साथ ही वे इतनी विश्वसनीय भी होनी चाहिए कि वर्षों तक अन्तरिक्ष यान सफलतापूर्वक कार्य कर सके।

इस क्षेत्र में अपनी बुद्धि और क्षमता का परिचय देने के लिए वैज्ञानिकों को असीमित अवसर सुलभ हैं। उदाहरण के लिए 'फ्युएल सेल' को ले लीजिए। यह एक ऐसा सिद्धान्त है, जिसके सम्बन्ध में वैज्ञानिक गम्भीरता के साथ अनुसन्धान कर रहे हैं।

मनुष्य की इंजीनियरिंग क्षमता और कौशल सदैव से इस बात पर निर्भर रही है कि उसमें प्रकृति द्वारा सुलभ पदार्थों का उपयोग करने की कितनी सूझ-बूझ है। अन्तरिक्ष वाहन और अतिस्वन विमानों के प्रादुर्भाव के कारण अनेक नए प्रकार के पदार्थों की आवश्यकता पड़ने लगी है।

अन्तर्ग्रही यात्रा एवं पृथ्वी के वायुमण्डल में पुनः प्रवेश की दृष्टि से पदार्थों की उपयोगिता के सम्बन्ध में आगे अनुसन्धान करना बहुत आवश्यक हो गया है। वैज्ञानिकों को ऐसी धातुओं की आवश्यकता है जो अत्यधिक ताप को सहन कर सकें और उन प्रतिकूल तत्त्वों से प्रभावित न हों जिनका सामना अन्तरिक्ष में और पृथ्वी के वायुमण्डल में प्रवेश करते समय अन्तरिक्ष वाहन को करना पड़ेगा। इस प्रकार की धातु और पदार्थों का निर्माण करना सम्भव भी हो गया है।

अत्यन्त ठण्डे रासायनिक द्रवों को



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

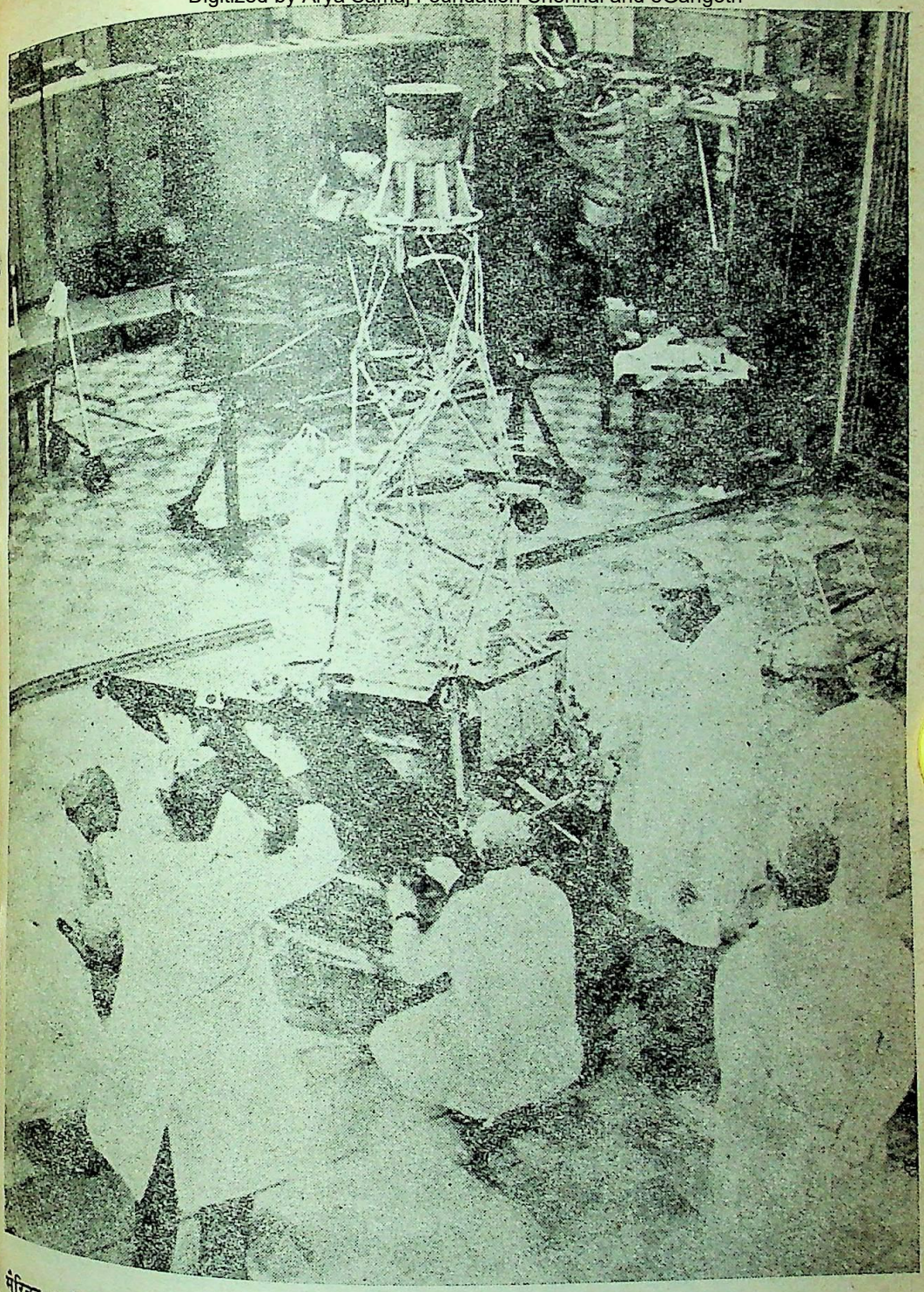

मेरिनर-२ में सौर पट्टियाँ (solarapenels) लगायी जा रही हैं जिसमें ९८०९ सौर बैटरियाँ २२२ वाट विद्युत उत्पादित करेंगी

अन्तरिक्ष-यान में एकत्र करने की दृष्टि से भी इस सम्बन्ध में आगे अनुसन्धान करने की आवश्यकता है। अत्यन्त निम्न ताप पर टैंकों में द्रव आक्सीजन रखने से विस्फोट की सम्भावना हो सकती है।

एक उत्तम अन्तरिक्ष वाहन उस समय तक बेकार रहेगा, जब तक उसे अन्तरिक्ष में पूरी तरह नियन्त्रित न किया जा सके।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह भी आवश्यक है कि वह उत्तम मार्गदर्शन और संचार-प्रणालियों से युक्त हो। नियंत्रण और मार्गदर्शन प्रणाली का हृदय 'जाइरोस्कोप' नामक यंत्र होता है। पिछले दस वर्षों में इस यन्त्र में महत्त्वपूर्ण सुधार किये गये हैं।

'क्रायोगोनिक जाइरोस्कोप' में डच वैज्ञानिक श्री ओन्स द्वारा १९११ में आविष्कृत उत्तम विद्युत प्रवाह सिद्धान्त का उपयोग किया गया है। उन्होंने यह खोज की थी कि बहुत अधिक ठण्डे (–४६०° फा.) किये जाने पर कुछ पदार्थों की विद्युत-प्रतिरोधक क्षमता बिलकुल नष्ट हो जाती है। अब वैज्ञानिक नये जाइरोस्कोप में इस सिद्धान्त का समावेश करने के लिए प्रयत्नशील हैं।

कर्नल जॉन ग्लेन तथा अन्य अमरीकी अन्तरिक्ष यात्रियों की ऐतिहासिक अन्तरिक्ष यात्राओं के अन्तर्गत पृथ्वी में पुनः प्रवेश करते समय संचार-सम्बन्ध पूर्णतः भंग हो जाते थे। अमरीकी वैज्ञानिक इसका कारण खोजने और इसे दूर करने में प्रयत्नशील हैं।

अपने अस्तित्व के प्रथम ४ वर्षों में 'नेसा' ने १५७ ध्वनि राकेट और ५५ उपग्रह छोड़े हैं। इन सबका उद्देश्य अन्तरिक्ष और ग्रहों के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करना था। इन परीक्षणों के फलस्वरूप पृथ्वी के बाह्य वायुमण्डल की घनता और रचना के सम्बन्ध में हमें अधिक जानकारी प्राप्त हुई है।

उपग्रहों और ध्वनि-राकेटों के माध्यम से किये गये परीक्षणों द्वारा यह ज्ञात कर लिया गया है कि १ हजार किलोमीटर की ऊँचाई तक विद्यमान वायुमण्डल में क्या-क्या तत्त्व मौजूद हैं तथा इतनी ऊँचाई तक वायुमण्डल का स्वरूप कैसा है? यह सूचना हमारे वायुमण्डल पर सूर्य के प्रभावों को समझाने और इस प्रकार निचले वायुमण्डल में होने वाले मौसम के परिवर्तनों के कारणों की जानकारी प्राप्त करने में बहुत सहायक सिद्ध हुई है।

पृथ्वी के कक्षागत दूरदर्शियों द्वारा पृथ्वी के वायुमण्डल के बाहर अन्तरिक्ष में स्थित नक्षत्रों और ग्रहों और आकाशगंगाओं का सूक्ष्म अध्ययन करने में बड़ी सहायता मिलने की सम्भावना है।

इधर ही में अन्तर्ग्रही अन्तरिक्ष के बारे में वैज्ञानिकों ने पर्याप्त जानकारी प्राप्त की है। 'नेसा' ने भी बाह्य अन्तरिक्ष के अनुसन्धान के अन्तर्गत ९ प्रयास किये हैं। इनमें सबसे महत्त्वपूर्ण मैरिनर-२ का प्रक्षेपण था। मैरिनर–२ १४ दिसम्बर १९६२ को शुक्र ग्रह के पार्श्व से गुजरा था।

इन परीक्षणों के द्वारा चुम्बकीय क्षेत्रों, अन्तर्ग्रही अन्तरिक्ष तत्त्वों तथा उल्कापिंडों और कणों के बारे में और अधिक जानकारी प्राप्त करने का प्रयास किया जा रहा है।

पिछले कुछ वर्षों में अन्तरिक्ष-विज्ञान ने उल्लेखनीय प्रगति की है। इसका प्रमुख कारण यह है कि अन्तरिक्ष का अनुसन्धान करने के लिए वैज्ञानिकों ने अनेक प्रभावशाली साधन—उपग्रह, ध्वनि-राकेट और अन्तर्ग्रही-राकेट—बना लिए हैं।

इस प्रकार के अनुसन्धान कार्यों के लिए सुशिक्षित और सृजनात्मक क्षमतायुक्त वैज्ञानिकों और इंजीनियरों की परम आवश्यकता है। इस आवश्यकता का अनुभव करते हुए 'नेसा' ने प्रतिभाशाली वैज्ञानिक छात्रों को अन्तरिक्ष विज्ञान और टैक्नोलोजी में उच्च प्रशिक्षण प्रदान करने के हेतु विश्वविद्यालयों की आर्थिक सहायता करने के लिए एक नया कार्यक्रम बनाया है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत उक्त कार्य के लिए अमरीकी विश्वविद्यालयों को अनेक अनुदान प्रदान किये गए हैं। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

12 JUN 1963

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

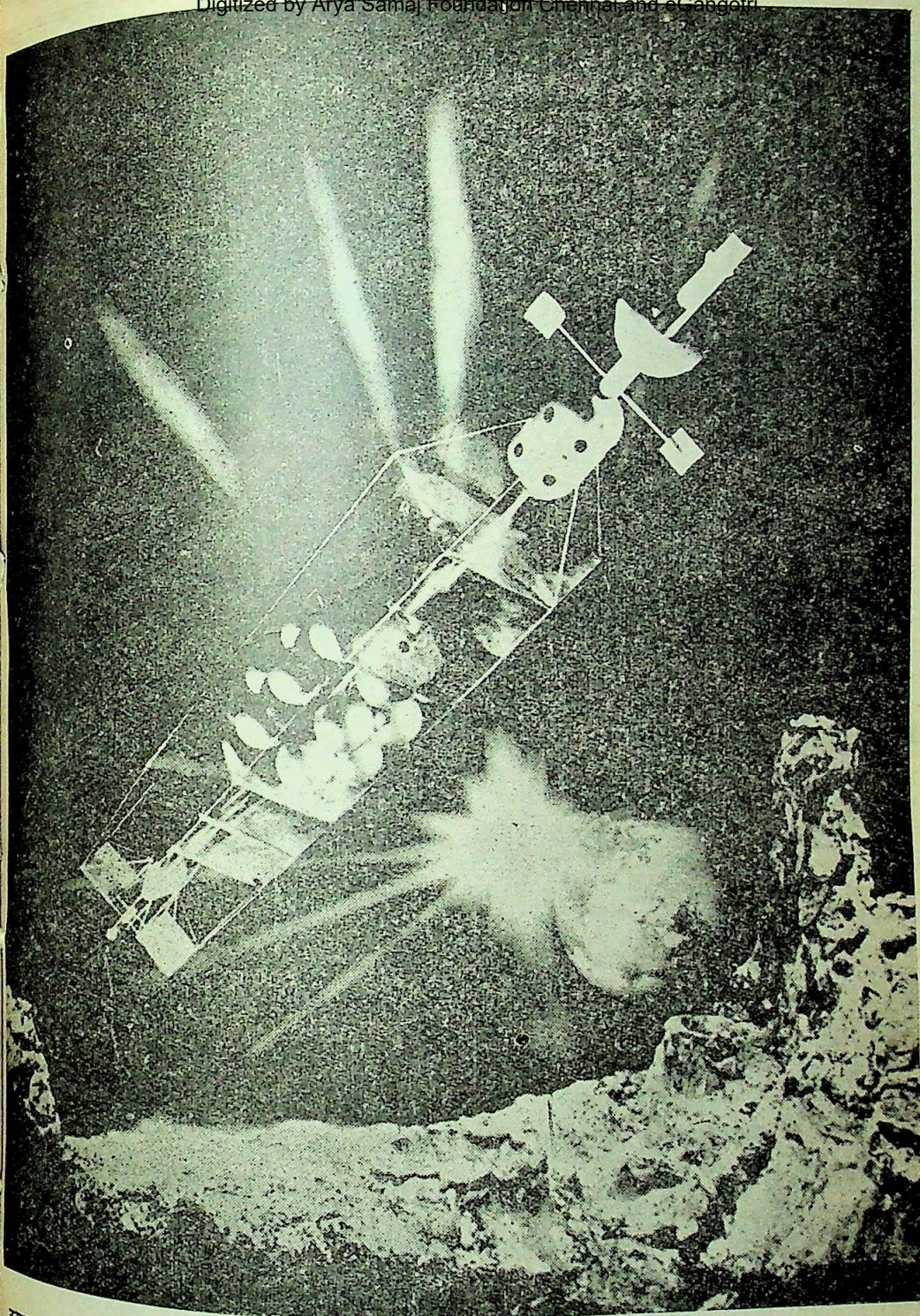

रसायन-चालित राकेटों से कहीं अधिक शक्तिशाली परमाणु-चालित राकेटों युक्त प्रस्तावित नये अन्तरिक्ष यान का एक नमूना

पहले १०० प्रतिभाशाली छात्र उच्च वैज्ञानिक प्रशिक्षण प्राप्त करने लगे हैं। १० चुने हुए विश्वविद्यालयों में से हर विश्वविद्यालय के १० छात्र इस दल में लिए गये हैं। आशा है कि भविष्य में इस कार्यक्रम का और भी विस्तार होगा ताकि अमरीका उड्डयन एवं अन्तरिक्ष अनुसन्धान के क्षेत्र में और भी अधिक प्रगति कर सके।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

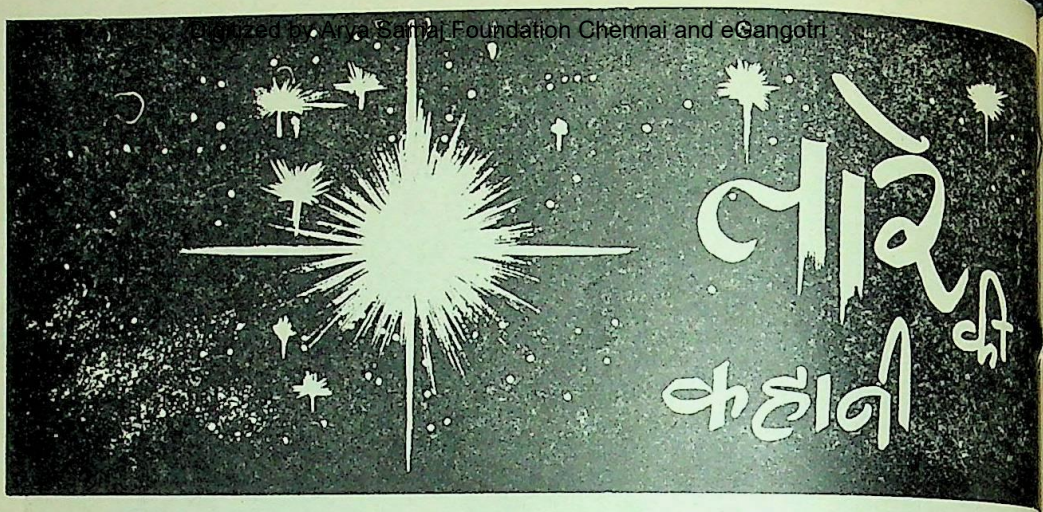


जगदीशचन्द्र गोविल

आकाश में टिमटिमाते करोड़ों तारों में साधारणतः कोई विशेषता नजर नहीं आती। इतना अवश्य प्रतीत होता है कि कुछ तारे अधिक चमकीले तथा कुछ मन्द प्रकाश के हैं। तारों की चमक में यह अन्तर इस कारण दिखायी पड़ता है कि उनमें ताप की विभिन्नता है और पृथ्वी से प्रत्येक की दूरी भी समान नहीं है। तनिक ध्यान से देखने पर कुछ तारों के रंगों में भी अन्तर दिखता है। कुछ ललछौंहें रंग के होते हैं, कुछ पीले, कुछ हलके नीले तो कुछ श्वेत वर्ण के। रंगों की यह भिन्नता उनकी सतह के ताप की भिन्नता के कारण दिखती है। उदाहरणार्थ ललछौंहें तारों का ताप नील-वर्णी तारों की अपेक्षा कहीं कम होता है।

साधारणतया तो किसी तारे को बरसों तक देखते रहने पर भी उसके रंग-रूप में कोई स्पष्ट परिवर्तन प्रतीत नहीं होता। किन्तु वास्तविकता यह है कि आयु बढ़ने के साथ तारों के आकार, चमक और रंगों में परिवर्तन होते रहते हैं। तारे जन्म लेते हैं, उनका विकास होता है और एक दिन उनका अन्त भी हो जाता है। आधुनिक ज्योतिषीय गणना के अनुसार औसत तारे का जीवन-काल लगभग आठ अरब वर्ष आँका गया है। स्पष्ट है कि हमारा जीवन-काल तारे की तुलना में इतना कम है कि अपने अति अल्प जीवन-काल में हम तारे के विकास-क्रम की विभिन्न अवस्थाओं को नहीं देख सकते। तारों से आने वाले प्रकाश का आधुनिक उपकरणों द्वारा विश्लेषण करने पर हम उनकी भौतिक एवं रासायनिक रचना के विषय में बहुत कुछ जान सकते हैं। साथ ही, उनकी गति, ताप तथा आकर्षण आदि का भी अनुमान लगाया जा सकता है। तारों के प्रकाश से प्राप्त वर्णपटों के सूक्ष्म अध्ययन द्वारा ज्ञात किया जा सका है कि तारों में हीलियम, हाइड्रोजन, आक्सीजन, सोडियम, लोहा आदि वे सभी मूल तत्त्व उपस्थित हैं जो प्रायः हमारी पृथ्वी पर भी पाये जाते हैं। कुछ तारों ने अपना जीवन-क्रम प्रारम्भ ही किया है तो कुछ अपनी प्रौढ़ावस्था तथा वृद्धावस्था तक भी पहुँच चुके हैं।

**तारे का जन्म**

आधुनिक विज्ञान का अध्ययन गुरुत्वाकर्षण, विकिरण तथा पदार्थों की अन्तर-रचना आदि से सम्बन्धित नियमों पर



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधारित है। उन्हीं के आधार पर गणित द्वारा तारों की रचना तथा विकासक्रम के विषय में उपयोगी निष्कर्ष निकले हैं। उनके आधार पर माना जाता है कि आकाशीय पिंडों की रचना से पूर्व अखिल ब्रह्माण्ड में समस्त पदार्थ एक अत्यन्त ही विरल (लगभग शून्य जैसी) गैस के रूप में फैला हुआ होगा। पानी की तुलना में वह गैस $(१०)^{२२}$ गुना हलकी रही होगी और उसका ताप अत्यधिक रहा होगा। अनुमानतः २-४ अरब वर्ष पहले उस सर्वव्यापी विरल गैस में किसी कारणवश कुछ हलचल पैदा होने से गैस का वह वृहत समुदाय घना हो गया। तत्पश्चात् गुरुत्वाकर्षण के कारण वह गैस सिमटकर कई समूहों में बँट गयी। वैसा प्रत्येक समूह एक-एक नीहारिका बन गया। उन समूहों का भी आकार आरम्भ में अत्यन्त विशाल रहा होगा। विख्यात ज्योतिर्विद् सर जेम्स जीन्स की गणनाओं के अनुसार प्रत्येक समूह का व्यास कम से कम २-३ प्रकाश वर्ष का रहा होगा, अन्यथा गैस नियमों के अनुसार इससे छोटे आकार के गैस पिंड से नीहारिका नहीं बन सकती। प्रत्येक समूह का सिमटना बराबर जारी रहा जिसके कारण उसका घनत्व और ताप बढ़ता गया। साथ ही, समूहों के मध्य पारस्परिक गुरुत्वाकर्षण के बावजूद अपना अस्तित्व बनाये रखने के लिए नीहारिकाएँ नाचने भी लगीं। उनके घूमने का वेग बढ़ता गया। फलतः घने गैसीय पदार्थ ने छिटक-छिटककर तारों का रूप धारण कर लिया। तब भी वे तारे इतने तप्त नहीं थे कि स्वयं प्रकाश उत्पन्न कर सकें। यद्यपि आज नये-नये तारे अन्तरिक्ष में जन्म ले रहे हैं किन्तु स्वयं प्रदीप्त न होने के कारण वे हमें दिखलायी नहीं पड़ते।

**ये बहुरंगी तारे हैं जिनके रंगों से इनकी संरचना तथा ताप आदि का अनुमान लगाया जा सकता है : १. अल्फाह वर्यूली; २. वनराज, ३. उत्तरा भाद्र तथा ४. ज्येष्ठ**

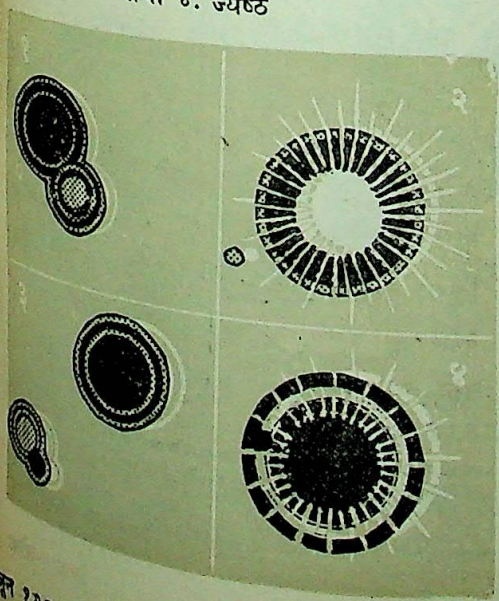

### शिशु-तारा

जन्म से लेकर अन्त तक तारे का सिमटना जारी रहता है। सिमटने की क्रिया के अन्तर्गत उसकी ऊर्जा लगातार उष्मा में परिवर्तित होती रहती है जिसके कारण तारे का ताप बढ़ता जाता है। कई करोड़ वर्षों के पश्चात तारे की सतह का ताप एक-डेढ़ हजार डिग्री और भीतर का ताप दस लाख डिग्री तक पहुँच जाता है। तारे का आकार यद्यपि बहुत फैला हुआ रहता है, तथापि ताप बढ़ जाने के कारण तारा प्रकाशमान हो उठता है और ललछौंहें रंग का दिखता है। एपसाइलन आरगी (Epsilon Aurigae) ऐसा ही एक अल्प वयस्क तारा है।

### तारे की युवावस्था

ताप की ओर बढ़ते-बढ़ते तारा अपनी युवावस्था पर पहुँच जाता है। तभी शक्ति उत्पादन का एक नया साधन इसके हाथ लग जाता है। तारों में हाइड्रोजन, ड्यूट्रियम, लीथियम, बेरीलियम और बोरन आदि तत्त्व अधिक मात्रा में होते हैं और ताप ऊँचा होने



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

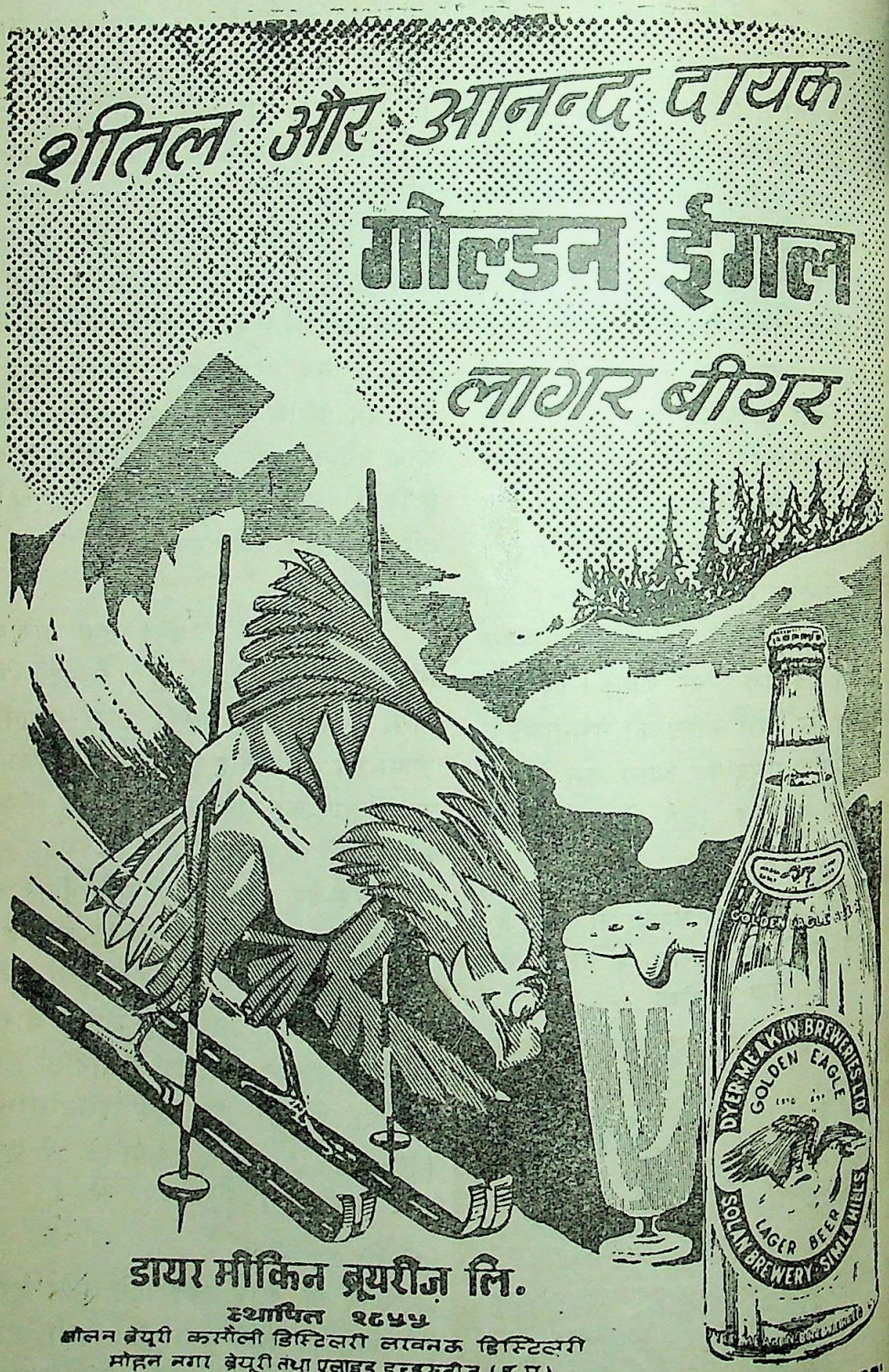


**डायर मीकिन ब्रूयरीज़ लि.**

स्थापित १८५५

सोलन ब्रेयरी कसौली डिस्टिलरी लखनऊ डिस्टिलरी
मोहन नगर ब्रेयरी तथा एलाइड इन्डस्ट्रीज़ (उ प्र)

सोल डिस्ट्रीब्यूटर्स : ट्रेड लिंक्स प्राइवेट लिमिटेड, ४६ पूसा रोड, नई दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

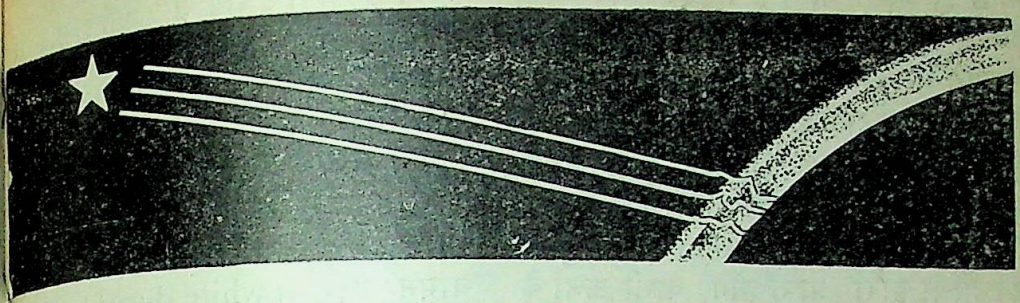

तारे की झिलमिलाहट उसकी प्रकाश-किरणें वायुमण्डल को भेद कर आने के कारण है

के कारण इनमें परस्पर ताप-नाभिकीय अभिक्रियाएँ (thermo-nuclear reactions) प्रारम्भ हो जाती हैं जिसमें अकल्पनीय ऊर्जा का उत्पादन होता है। यौवन के प्रारम्भ में दस लाख डिग्री ताप पर ड्यूट्रियम परमाणु के नाभिक अर्थात् ड्यूट्रान तथा हाइड्रोजन नाभिक के मध्य अग्निक्रियाएँ होती हैं। उसमें अपार ऊर्जा विमुक्त होने के कारण तारों का ताप लगभग ३० लाख डिग्री तक पहुँच जाता है। इस क्रिया में ड्यूट्रान के समाप्त हो जाने पर लीथियम-हाइड्रोजन के मध्य अभिक्रिया हो जाती है जो ताप को ४० लाख डिग्री तक ऊँचा पहुँचा देती है। तत्पश्चात् ४० लाख डिग्री ताप पर बेरीलियम-हाइड्रोजन की तथा ६० लाख पर बोरन-हाइड्रोजन अभिक्रियाएँ सम्पन्न होती हैं। इनके फलस्वरूप समस्त पदार्थ हीलियम में परिवर्तित हो जाते हैं और ताप ७० लाख डिग्री तक पहुँच जाता है। इस युवावस्था में तारा क्रमशः दीर्घकालीन, सीफिआइड और लघुकालीन परिवर्ती तारे के रूप में आकाश में दिखायी पड़ता है। इसकी चमक की घटा-बढ़ी तथा गुरुत्वाकर्षण में परिवर्तन उपरोक्त क्रियाओं के कारण ही होतें हैं। यौवन के चरम पर पहुँचते-पहुँचते तारे की पदार्थ-मात्रा अधिकांशतः समाप्त हो चुकी होती है। हाइड्रोजन अवश्य प्रचुर मात्रा में बची रहती है। अतः तारे को निरन्तर ऊर्जा प्राप्त करने का एक दीर्घजीवी साधन प्राप्त हो जाता है।

**प्रौढ़ावस्था में तारा**

तारा अब प्रौढ़ावस्था में पदार्पण करता है। ७० लाख डिग्री के विकटतम ताप पर हाइड्रोजन के परमाणुओं का विघटन हो जाता है और प्रोटान तथा इलेक्ट्रान पृथक हो जाते हैं। फिर चार प्रोटान परस्पर संश्लेषण करके हीलियम परमाणु का नाभिक बनाते हैं। हीलियम नाभिक का द्रव्यमान चार प्रोटानों के द्रव्यमान से तनिक कम होता है। वास्तव में संश्लेषण की इस क्रिया में शेष पदार्थ सीधे ही ऊर्जा में परिणत हो जाता है। इस क्रिया में इंच मात्र के पदार्थ से बहुत ही अधिक ऊर्जा उत्पन्न हो जाती है।

हाइड्रोजन की ताप-नाभिकीय अभिक्रिया के कारण तारे का ताप तथा चमक और भी अधिक हो जाती है। भारी भरकम तारों के आन्तरिक भाग का ताप तो दो करोड़ डिग्री से भी अधिक हो जाता है। ताप के बढ़ने के साथ ही विघटन तथा संश्लेषण की क्रियाएँ तेजी से होने लगती हैं। फलतः आयु बढ़ने पर तारा अपनी हाइड्रोजन तेजी के साथ गंवाता है। फिर भी हाइड्रोजन की मात्रा इतनी अधिक होती है कि वह उसे करोड़ों वर्षों तक तप्त बनाये रखने के लिए काफी होती है।

**तारा, वृद्धावस्था में**

जब तक हाइड्रोजन-क्रिया जारी रहती है तब तक तारे का ताप और उसकी चमक



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दोनों ही बढ़ती जाती है। एक दिन ऐसा आता है जब तारे की समस्त हाइड्रोजन समाप्त हो जाती है। वही तारे की वृद्धावस्था का आरम्भ होता है। उसकी ऊर्जा का महान स्रोत सूख जाता है, और चमक मन्द होने लगती है। गुरुत्वाकर्षण के कारण तारे का सिकुड़ना जारी रहता है। सिकुड़ने की क्रिया द्वारा प्राप्त होने वाली ऊर्जा के कारण तारे की चमक अचानक ही नहीं बुझ जाती, बल्कि तारा धीरे-धीरे ठण्डा पड़ता जाता है। साथ ही इसका पदार्थ भी अत्यन्त घना होता जाता है। अत्यधिक दबाव बढ़ जाने के कारण पदार्थ के परमाणुओं का एक प्रकार से चूर्ण बन जाता है, और, परमाणु के नाभिक के चारों ओर चक्कर काटने वाले सभी इलेक्ट्रान अपने पथ से हटकर अलग हो जाते हैं। पदार्थ की वह दशा कुछ विचित्र हो जाती है। ताप की अधिकता के कारण वह अवस्था न तो ठोस रह सकती है, न द्रव ही। पदार्थ के परमाणु टूट जाते हैं। नाभिक एक-दूसरे के अत्यन्त निकट आ जाते हैं तथा उनका घनत्व बढ़ता जाता है। वास्तव में इसका घनत्व पृथ्वी पर पाये जाने वाले ठोस ठोस पदार्थ के घनत्व से भी हजारों गुना अधिक होता है। उस पदार्थ को यदि एक दियासलाई की डिबिया में भरें तो उसे उठाना असम्भव हो जाएगा।

सिकुड़ने के कारण तारे का आकार भी छोटा हो जाता है और श्वेत वर्ण के वामन तारे (white dwarf) के रूप में यह आकाश में चमकता है। लुब्धक का छोटा साथी इसी प्रकार का वामन तारा है।

**जीवन का अन्त**

कालान्तर में सिकुड़ने की क्रिया भी समाप्त हो जाती है और तारे को शक्ति प्रदान करने वाला अन्तिम सहारा भी टूट जाता है। इस कारण तारा तेजी के साथ ठण्डा होने लगता है। मन्द होते-होते अन्ततः यह प्रकाश देना बिलकुल ही बन्द कर देता है। इस प्रकार गगन मण्डल के अनगिनत तारों की बस्ती का एक सदस्य सदैव के लिए लुप्त हो जाता है तथापि उसका स्थान लेने के लिए कहीं न कहीं किसी नये तारे का जन्म अवश्य ही हो रहता है। ●

**आकाश गंगा का एक दुर्लभ दृश्य**

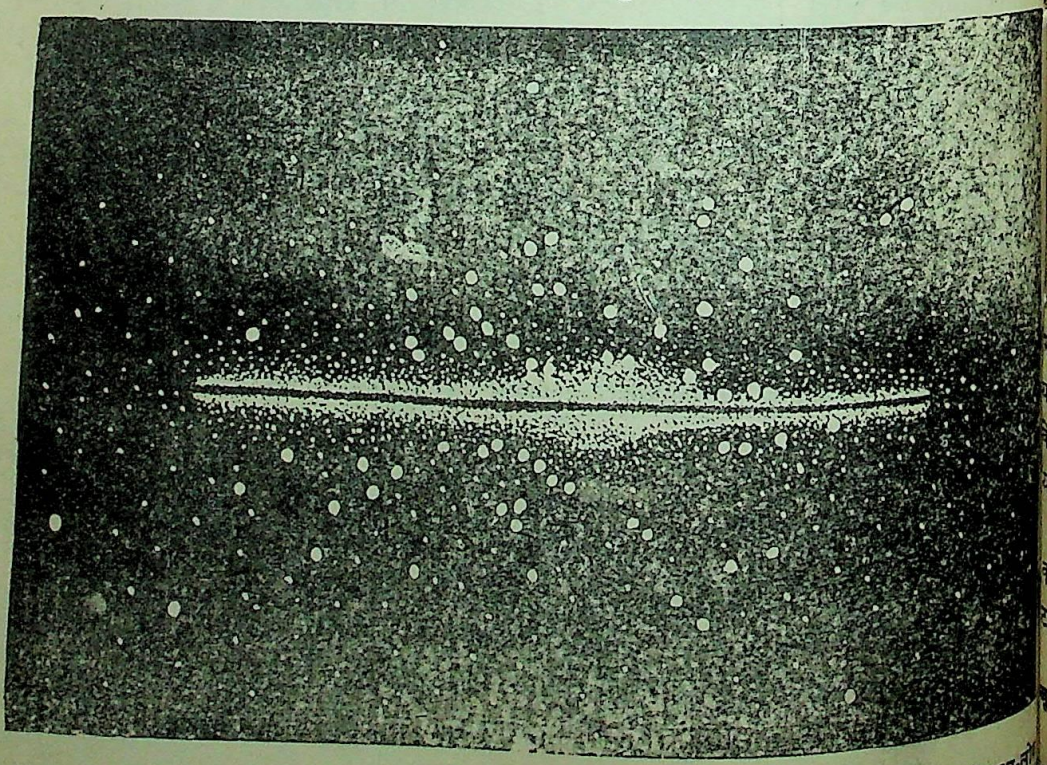

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

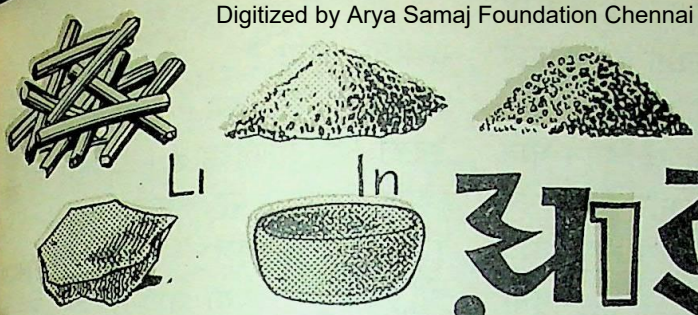


# धातु और संकरधातु

सत्यकुमार

प्रकृति में पाये जाने वाले तत्त्वों में दो-तिहाई धातु हैं। लोहा, ताँबा, जस्ता, एल्यूमिनियम, सोना, चाँदी आदि अधिक काम आने वाली धातुएँ हैं। इनके अतिरिक्त भी अनेक धातुएँ हैं जिनके अद्भुत उपयोग हैं।

मैग्नीशियम कम ताप पर ही जलने लगता है। इसके जलने से एक्टीनिक किरणें निकलती हैं जिनमें तीव्र चकाचौंध पैदा करने वाली चमक होती है। उन किरणों का उपयोग फोटोग्राफी, आतिशबाजी तथा अग्नि द्वारा प्रतिक्रियाएँ प्रारम्भ कराने में होता है। यह धातु हलकी होने के कारण एल्यूमिनियम के साथ वायुयान के विभिन्न पुर्जे बनाने में काम आती है।

सोडियम पर जल की क्रिया द्वारा हाइड्रोजन बनाने की विधि से सभी परिचित हैं। इस क्रिया में इतना ताप निकलता है कि सोडियम जलने लगता है। पोटैशियम भी इसी का साथी है। इसे किरासन तेल या पेट्रोल में रखकर खुली वायु तथा जल के संसर्ग से बचाया जाता है। द्रवित सोडियम का परमाणु-शक्ति में विशेष महत्त्व है।

साधारणतः आक्सीजन को ही जलने की क्रिया में सहायक माना जाता है, किन्तु टाइटेनियम, जर्कोनियम व हैफनियम धातुएँ नाइट्रोजन में भी जलती हैं। वायु से इन धातुओं की रक्षा करने के लिए हीलियम जैसी अक्रिय गैसों का उपयोग किया जाता है। शुद्ध अवस्था में इन तीनों धातुओं पर अम्ल, वायु व खारे जल का कोई प्रभाव नहीं होता। जर्कोनियम के अधिकांश खनिज बहुमूल्य पत्थरों की श्रेणी में आते हैं। हीरे-जवाहरातों की जगह प्रायः उन पत्थरों का प्रयोग होता है। परमाणु-शक्ति संस्थानों में भी जर्कोनियम की बहुत माँग रहती है।

शुद्ध टाइटेनियम ताँबे की तरह नरम होता है। यदि इसमें थोड़ा मैंगेनीज, क्रोमियम व लोहा मिला दिया जाए तो वह अपने भार से दूने इस्पात के बराबर मजबूत हो जाएगा। अतः बड़ी मशीनों के भार को कम करने में यह विशेष महत्त्वपूर्ण है। सैन्य-इंजीनियरिंग में इस धातु की बहुत माँग रहती है। इस धातु के उपयोग से टैंक तथा वायुयान के भार में ३०-४०% तक कमी की जा सकती है। टाइटेनियम के उस्तरे बहुत मजबूत होते हैं। नाइट्रिक अम्ल का भी इस धातु पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

सीरियम धातु लोहे जैसी दिखती है। रगड़ लगने से इसमें चिनगारी पैदा होती है। लोहे के साथ इसे मिलाकर चकमक



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पत्थर बनाते हैं जो सिगरेट लाइटर में काम आता है। इस धातु का उपयोग गैस बत्तियों के मेण्टिल बनाने में भी होता है।

सोडियम परिवार की लीथियम धातु सबसे हलकी है—पानी के भार से लगभग आधी। इस परिवार में सबसे भारी धातु सोडियम है—पानी के भार से २२½ गुना भारी। इरीडियम के साथ ओस्मियम मिला कर फाउन्टेन पेनों के निब की नोक बनाने में काम आता है।

घनवर्द्धता में सोना सबसे आगे है। ३″×३″ ३″ सोने के टुकड़े को पीटकर एक वर्ग एकड़ पतरे में बदला जा सकता है। सोने के वर्क की मोटाई एक इंच के ४० लाखवें भाग से भी कम होती है। एक ग्राम सोने से लगभग डेढ़ मील लम्बा तार खींचा जा सकता है।

ताँबे का अधिकांश उपयोग विद्युत्वाहक तार बनाने में होता है। वैसे विद्युत और ताप की श्रेष्ठ सुचालक चाँदी होती है परन्तु आभूषणों तथा साज-सज्जा के अन्य सामान में चाँदी का अधिक उपयोग होने के कारण, विद्युत वाहक उपकरणों में उसका उपयोग नहीं होता। प्लेटिनम भी अत्यन्त उत्तम धातु है। सोने और चाँदी की भाँति इसका भी उपयोग आभूषणों में विशेषतः होता है। इसका मूल्य सोने से लगभग दुगुना रहता है। इस पर अम्ल आदि का प्रभाव न होने के कारण प्रयोगशाला के कुछ उपकरण बनाने में इसका उपयोग होता है। प्लेटिनम एक उत्तम उत्प्रेरक भी है, अतः गंधक का अम्ल बनाने में इसका उपयोग होता है। युद्धकाल में प्लेटिनम का महत्त्व बढ़ जाता है। अतः उन दिनों आभूषणों के लिए प्लेटिनम के स्थान पर पैलेडियम नामक एक अन्य श्रेष्ठ धातु उपयोग किया जाता है। पैलेडियम और किसी उपयोग में नहीं आता।

बिजली के बल्बों में टंगस्टन तार का उपयोग होता है। इस धातु का द्रवांक ३३७०°C है। युद्ध के प्रतिरक्षा-साधनों में इसका विशेष महत्त्व है। कवच और शिरस्त्राण बनाने में यह काम आता है। टंगस्टन को पिघलाना सहज नहीं। यदि इसके द्रवांक को दुगुना कर दिया जाए तो सूर्य की सतह की गरमी का किंचित् आभास हो सकता है।

इसके विपरीत, पारा धातु ऐसी है जिसे पिघलाने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती। सामान्य ताप ही नहीं, शून्य के ३८° नीचे तक यह द्रव ही बना रहता है। इसमें यदि थोड़ा थैलियम मिला दिया जाए तो शून्य से ६५°C नीचे तक भी यह द्रव्य बना रहेगा। इस गुण के कारण इसका उपयोग ठण्डे प्रदेशों में काम आने वाले विद्युत उपकरणों में किया जाता है।

थैलियम धातु सीसे जैसी होती है। सीसे में मिलाने से इसका द्रवांक बहुत कम जाता है। थैलियम विषैला है। इसके लवण कीटाणुनाशक के रूप में काम आते हैं।

पारा धातु, केलास के रूप में

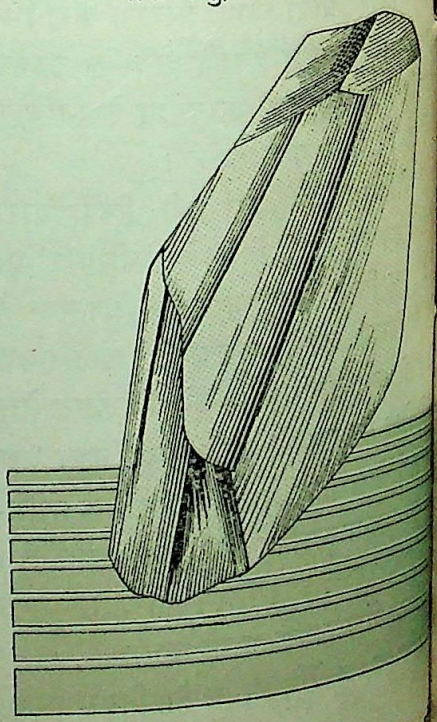



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछेक औषधियों में भी इसका सूक्ष्म मात्रा प्रयुक्त होती है। असावधानी से किया गया इसका प्रयोग घातक सिद्ध हो सकता है। यह अनेक धातुओं से मिलकर उपयोगी संकर धातु (alloys) बनाता है। इसके विषैले स्वभाव के कारण उन संकर धातुओं का उपयोग खाने के बर्तन बनाने में नहीं करना चाहिए। चश्मे के लेन्स बनाने में भी थैलियम काम आता है। थैलियम के लवण जलने पर हरे रंग का प्रकाश देते हैं।

टैलुरियम के यौगिक दुर्गन्धयुक्त होते हैं। टैलुरियम से काम करने वालों की श्वास में दुर्गन्ध आती है। इसका महत्त्वपूर्ण गुण यह है कि इसे इस्पात में मिलाने पर इस्पात काटने योग्य नर्म हो जाता है। कलई (टिन) में टैलुरियम मिलाने से मजबूती आ जाती है। ताँबा व एल्यूमिनियम से मिलकर टैलुरियम मशीनें बनाने में काम आता है। चाँदी और सोने के साथ मिलाकर टैलुरियम को नकली दाँत बनाने या दाँतों की पोल भरने के काम में लेते हैं। काँच-उद्योग और फोटोग्राफी में भी इसका उपयोग होता है।

इण्डियम धातु की भी अपनी विशेषता है। यह धातु अन्य धातुओं से शीघ्र ही चिपककर जम जाती है। इण्डियम के ही दो टुकड़ों को यदि मिलाकर दबा दिया जाए तो पुनः उन्हें काटकर ही अलग किया जा सकता है। मोम की तरह इसे भी गरम करके चाहे जिस आकार में ढाला जा सकता है। विस्मथ के साथ मिलाने पर इसका द्रवांक ४५°C हो जाता है। कल्पना कीजिए, आपने किसी मित्र को चाय पर बुलाया और विस्मथ-इण्डियम मिश्रित धातु को उसके आगे रख दिया। मित्र यह देखकर हैरान रह जाएगा कि चाय के प्याले में चीनी चलाते-चलाते चम्मच न जाने कहाँ गुम हो गया! करेण्ट शाट होने पर अथवा चारों ओर आग लग जाने पर इसके बने फ्यूज तुरन्त पिघल जाते हैं। इसका रंग चाँदी जैसा होता है। नर्म होने के कारण चाहे जिस धातु में इसका टाँका लगाया जा सकता है। प्लास्टर आफ पेरिस की तरह इण्डियम मिश्रित धातुओं के भी खिलौने, मूर्तियाँ आदि बनाये जाते हैं।

**बेरीलियम का असाधारण बड़ा धातु-खण्ड**

गैलियम का द्रवांक ३०°C है। इसे हथेली पर रखकर मसल दिया जाए तो यह द्रव्य हो जाएगा। इसका क्वथनांक बहुत ऊँचा २०७०°C है। अतः अति उच्च ताप मापने के थर्मामीटर बनाने में इसका उपयोग किया जाता है। कम ताप पर पिघलने वाली कई संकर धातुएँ गैलियम मिलाकर बनायी जाती हैं।

क्रोमियम अत्यधिक कठोर धातु है। कठोरता में हीरे और कीटोन के बाद इसी का स्थान है। स्टेनलेस स्टील में २०% तक क्रोमियम होता है। इसीलिए उन पात्रों में अम्ल गरम कर लिए जाते हैं। कुछ समय पूर्व इस्पात को काटने वाले यन्त्र प्रायः टंगस्टन-कार्बाइड के बनाये जाते थे, अब क्रोमियम, कार्बन व निकिल मिश्रित संकर धातु से बनते हैं।

थोरियम भी एक उपयोगी धातु है। एक्स-रे तथा वैकुअम ट्यूब आदि में इसका कम उपयोग नहीं। रेडियोधर्मी होने के कारण यह कैंसर जैसे रोगों में तथा घड़ी

[शेष पृष्ठ ५३ पर]



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# विचित्र संसार

## ये जेबी-टट्टू

ये टट्टू घोड़ा परिवार के ही सदस्य हैं किन्तु हैं बिलकुल पाकेट-एडीशन—सवा दो फुट से भी कम ऊँचे ! ब्रिटेन के ससेक्स (Sussex) स्थित बोडियम (Bodiam) के निकट साउथ पार्क (South Park) ऐसा ही प्रदेश है जहाँ के शेटलैण्ड टट्टू (Shetland ponies) अपने ठिगने कद के लिए संसार में प्रसिद्ध हैं। इनकी ऊँचाई २६ से ४२ इंच तक की रहती है।

कुत्ते के शौकीनों की तरह इन जेबी-टट्टू के भी शौकीनों की कमी नहीं। मालिक-मालकिन की गोद में गर्मी लेते हुए, कार की खिड़की से मुँह निकालकर ये सैर का आनन्द लेते हैं तथा बाग-बगीचों में बच्चों का मनोरंजन भी करते हैं।

ये टट्टू छोटे होते हुए भी पूर्ण स्वस्थ, सशक्त और अपनी रक्षा स्वयं करने में समर्थ होते हैं। इनके लम्बे-लम्बे बाल शीत से रक्षा करते हैं। अन्य घोड़ों जैसा तबेला इन्हें नहीं चाहिए। आपके दिये हुए किसी भी अलग कोने में मस्त खड़े रहेंगे !

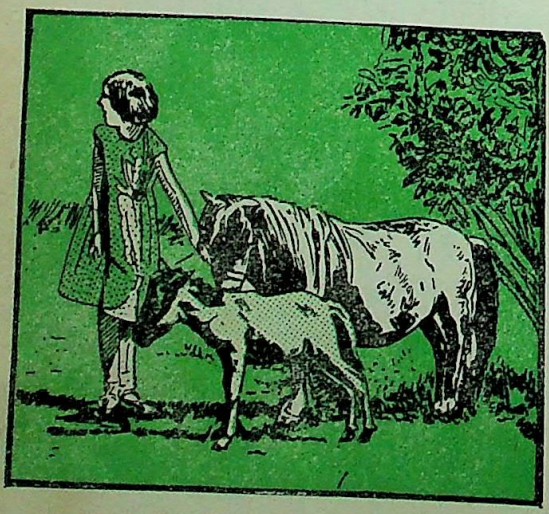

## बन्दरों के लिए खाने की घण्टी

अमरीका के उष्ण प्रदेशों में पाये जाने वाले कुछ वृक्ष ऐसे हैं जिनके फल बन्दरों के लिए खाने की घण्टी का काम देते हैं। पक कर तैयार होने पर अपने मिगी जैसे सुस्वाद बीजों को छितराने के लिए फल एक विस्फोट के साथ फूट पड़ता है और बीज पुनः परागण के लिए दूर तक बिखर जाते हैं। वह विस्फोट इतना स्पष्ट होता है कि दूर-पास के पेड़ों पर रहते हुए बन्दर उस आवाहन को सुन लेते हैं और खोजबीन कर बीजों को बड़े चाव से खाते हैं।

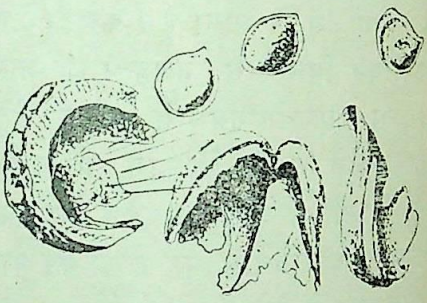

## आपकी आयु·····१५८ वर्ष !

आपसे मिलिये, आप हैं शेरअली। अजरबेजान के एक ऊँचे पहाड़ पर बसा छोटा-सा गाँव आपका खानदानी घर है। पिछले मास ही आपने अपनी १५८वीं वर्षगाँठ मनायी है ! फरफराती दाढ़ी, चाँदी जैसी चमकीली है, दाँत कुछेक ही गिरे हैं, आँखें जरा ही कमजोर हैं—फिर भी प्रसन्न बहुत हैं।

इस आयु में भी और कुछ नहीं तो परपोतों और उनके नन्हें परपोतों की देख-भाल करते रहते हैं। बारह महीने खुले में सोते हैं और डाक्टर की चिकित्सा में आपका विश्वास नहीं !



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

## सुपारी तोड़ चट्टानें

सियाम की खाड़ी से सटी हुई दो पहाड़ी चट्टानें ऐसी हैं मानों सुपारी काटने का सरौता। खाड़ी में जब तक समुद्री भाटा रहता है उसमें से छोटी-सी नाव गुजर सकती है।

ज्वार आते ही पानी विकट वेग से दोनों को टकरा देता है। अनेक बार दोनों के मध्य छोटे-छोटे शिलाखण्ड रखकर देखा गया है जिन्हें उन चट्टानों ने सरौते के बीच रखी सुपारी की तरह तोड़कर रख दिया है। ज्वार उतर जाने पर पुनः दोनों दस फुट का अन्तर छोड़ देती हैं।

## प्रखर सूर्य-ताप में भी शीत से मृत्यु

भूमध्यरेखा पर सूर्य-ताप की प्रखरता का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। तिस पर भी शीत से जमकर २० व्यक्तियों की मृत्यु को विचित्र ही कहा जाएगा। मध्य अफ्रीका की बिरंगा पर्वत श्रेणियों के सुप्रसिद्ध माउन्ट केरिसिम्बी (१४५०० फुट) के निकट ब्रेन्का नामक ज्वालामुखी का निरीक्षण करने गये हुए ४० व्यक्तियों के अभियानदल की यह कहानी है।

१२००० फुट ऊँचे पहुँचने पर अचानक बर्फीले तूफान ने उन्हें घेर लिया। ठीक दोपहर का वक्त था और सूर्य अपने चरम पर था। सभी अपनी-अपनी नेत्र रक्षक ऐनकें पहने हुए थे। उस तूफान ने तम्बूओं के पाँव ही उखाड़ दिये। मारे सर्दी के आरोही दल का ठहरना असंभव हो गया। वे न तो वहाँ ठहर ही सकते और न आगे-पीछे जाना संभव था। अतः दल के व्यक्ति एक दूसरे से इस प्रकार सटकर—अँग सिकोड़े, चिपके बैठे रहे मानों अनाज के कोठे में बोरे चुन दिये गये हों। शारीरिक ताप बनाये रखने का प्रत्येक प्रयत्न विफल होता रहा और पवन में हिम की शीतलता सीमा को लाँघ गयी। केवल छः घण्टे के अन्दर दल का आधा बल, २० व्यक्ति जमकर निष्प्राण हो चुके थे—उस भूमध्यरेखा पर, दोपहर को प्रखर सूर्य-ताप के नीचे !

## भानमती का पिटारा

इनके घोंसले में ऐसी-ऐसी विचित्र वस्तुएँ छिपी मिलेंगी जिनके उस जगह होने की कल्पना भी नहीं हो सकती। खोये हुए सिक्के, नन्हे चम्मच तथा हीरे की अँगूठियाँ तक भी इसमें मिल सकती हैं।

कौए के भाई-भतीजे, ये पक्षी नीलकण्ठ-परिवार के हैं। चोंच खोले हुए ये नन्हे, इस प्रतीक्षा में हैं कि कब माँ आये और अपना चबाया हुआ नर्म निवाला इनकी चोंच में उतार दे। इन्हें पाल कर बातें करना भी सिखाया जा सकता है। जैसे प्राणियों में प्रायः बुद्धि होती है, वैसे ये आपकी सिखायी बातों को तोते की रट की तरह सुना अवश्य देंगें, किन्तु सोचकर बात का जवाब न दे सकेंगे।

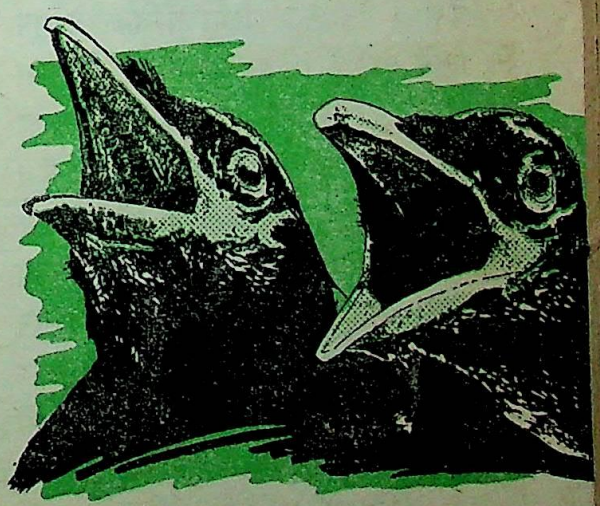



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुमारी रेखा टंडन

सुबह की सैर इन दिनों कैसी ताजगी देती है ! इस सैर का सदुपयोग पेड़-पौधों से मित्रता बढ़ाने में भी किया जा सकता है। इस कार्य में पत्तियाँ आपको कुशल परिचायकों का काम देंगी। भिन्न-भिन्न वृक्षों की पत्तियाँ आकार-प्रकार, रंग-रूप और व्यवस्था-क्रम में विभिन्नता प्रदर्शित करती हैं। पत्तियों के बाह्य लक्षणों से ज्ञात किया जा सकता है कि अमुक वृक्ष किस परिवार का है।

### जैसे पेड़, वैसी पत्तियाँ

केले के पेड़ की शोभा लम्बे-लम्बे सूप जैसे इसके पत्ते हैं। नव-पल्लवित अवस्था में ये पत्ते साबूत ही रहते हैं। अवस्था बढ़ने के साथ-साथ फटते-चिरते जाते हैं। बड़े से बड़े ये पत्ते १० फुट लम्बे और २ फुट चौड़े भी पाये जाते हैं। खम्भे जैसा इसका मोटा तना तथा पत्ते मांगलिक अवसरों पर काम आते हैं।

चीड़, देवदार तथा अनन्नास की श्रेणी के वृक्ष अपने विचित्र जटा-जूटधारी पत्तों से पहचाने जा सकेंगे। कहीं तो लम्बे रेशे जैसे और कहीं सुई-सूये जैसे इनके पत्ते १२ से १८ इंच तक लम्बे होते हैं। मोर पंखी के नन्हे पंखे जैसे पत्ते ऐसे लगते हैं जैसे किसी मोर ने पंख फैलाये हों।

ताड़-परिवार भी विविधतापूर्ण और विस्तृत है। इनके पत्ते चटाई उद्योग की रीढ़ हैं। लाखों परिवार इसी उद्योग पर निर्भर हैं। इनमें ब्राजील देश का *Raphia taedi gera* नामक ताड़ का वृक्ष तो अपनी श्रेणी के वृक्षों में सबसे बड़े पत्तों का है। इसके पत्ते का डंठल १३ फुट होता है। इसका पत्ता ३० फुट चौड़ाई और ६५ फुट तक लम्बाई प्राप्त करता है।

जल-कमल भी पत्तों में अनोखापन लिये हुए है। कमल जल ही में उगता है, जल ही में रहता है फिर भी जल से अलिप्त रहता है। इन कमलपत्रों में भी विशालकाय पत्ते प्रकृति में हैं। विक्टोरिया रेजिया के पत्ते ६ फुट व्यास के बड़े थाल जैसे दिखते हैं। हलके-फुलके बालक तो उस पर बैठकर तालाब की सैर भी कर लेते हैं।

मेडागास्कर में पाये जाने वाले जाली-



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दार समुद्री पौधे (lattice plant) का पत्ता अप्रतिम है। यह पता १८ इंच लम्बा होता है और समूची सतह रेशों-शिराओं से बनी जाली सरीखी होती है।

Pitcher plant रेगिस्तानी न होते हुए भी जल-संग्राहक है और जलाशय के निकट ही रहता है। इसमें दो प्रकार के पत्ते रहते हैं—नन्हे हरे पत्ते और पानी भरे घड़े जैसी फलियों के आकार के पत्ते। यह पौधा परजीवी वनस्पतियों की तरह अपने आतिथेय वृक्ष के सहारे टिका अवश्य रहता है, अपने आतिथेय को हानि नहीं पहुँचाता। अपने लिए जल का संग्रह इन घड़ों में ही कर लेता है। अधिकांश जल तो उन फलियों में फँस जाने वाले कीटों द्वारा ही मिल जाता है।

शहतूत-परिवार में कई जातियाँ हैं। तदनुसार ही उनकी पत्तियों में विभिन्नता है। गहरे कत्थई, लाल, काले और हरे, रंग-बिरंगे इनके पत्ते दो-दो तथा तीन-तीन के जोड़ों में होते हैं। मेडागास्कर का दूसरा वृक्ष, जिसे पथिक वृक्ष (Traveller's tree) कहते हैं, आधा केला, आधा ताड़ है। इसके पत्ते केले के वृक्ष जैसे हैं और पत्रनाल ताड़ के एक बड़े पत्ते के समान है। इनमें पानी भरा रहता है जो थके-प्यासे पथिकों को बड़ा सहारा देता है।

टीजेल (Teasel) नामक वृक्ष प्यासा वृक्ष कहलाता है। इसके पत्ते पत्रनाल पर नीचे से इस प्रकार जुड़े रहते हैं कि एक प्याला सरीखा बन जाता है। उसमें पानी भरा रहता है। सूखे के दिनों में वृक्ष का जीवन इसी पानी पर निर्भर रहता है।

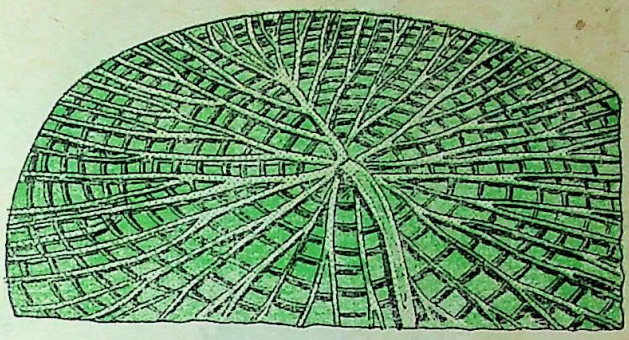

**विक्टोरिया रेजिया (*Victoria Regia*) के विशाल, गोल-पत्ते का निचला दृश्य**

**मेडागास्कर में पाये जाने वाले एक जलीय पौधे की दुर्लभ पत्ती। १८ इंच तक की बड़ी, यह पत्ती केवल शिराओं का ही एक जाल जैसी दिखती है**

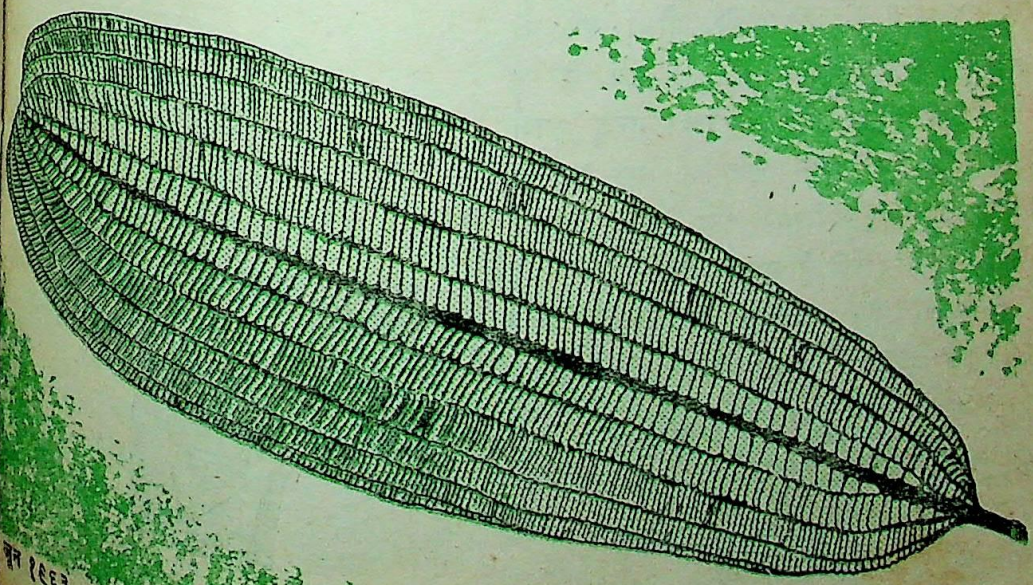



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

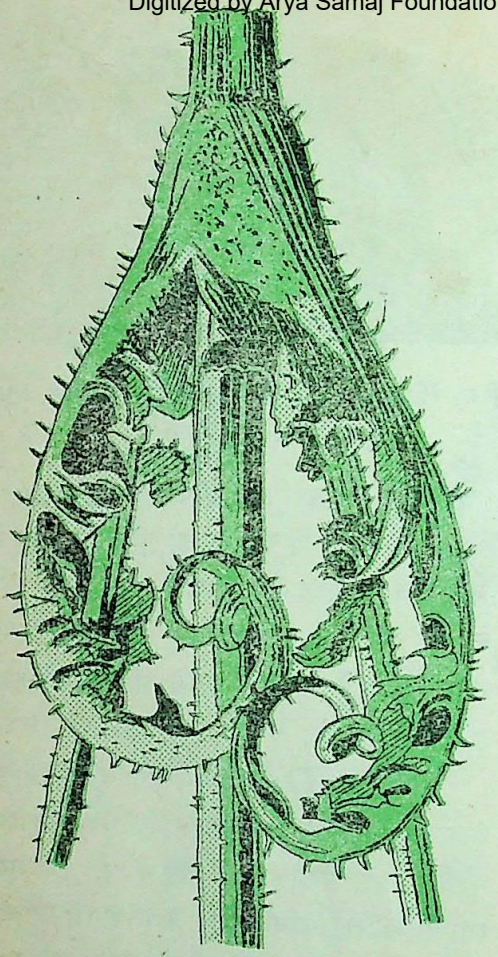

डिप्सेकस (Dipsacus) नामक प्यासे पौधे की ये पत्तियाँ आमने-सामने, नीचे की ओर जुड़ी रह कर एक कप सरीखा बना लेती हैं जिसमें वर्षा का जल एकत्रित रहता है

छुईमुई जैसे संवेदनशील पौधों की भी पत्तियाँ बड़ी मनोरंजक हैं। हाथ से छू जाने पर अथवा कोई भी नन्हीं वस्तु स्पर्श कर जाने पर, यहाँ तक कि तेज वायु के झोंके से भी पत्तियाँ इस तरह मूँदकर झुकी-झुकी पड़ती हैं मानो लज्जा से गड़ी जा रही हों। वीनस फ्लाइ ट्रैप जैसे परजीवी पौधे की पत्तियाँ तो बड़ी निष्ठुर और घातक हैं। इन पत्तियों पर तो कोई भी कीट, मक्खी, पतंगा आदि के बैठने की देर है; ये तुरन्त बन्द हो जाएँगी और कीट को कैद कर लेंगी।

अनेक पत्तियाँ खाने, पीने तथा [illegible] के काम में आती हैं। तम्बाकू खाने [illegible] धूम्रपान के शौकीनों की तो अति प्रिय [illegible] है। खाने योग्य पत्तियों में पालक, [illegible] मूली, बथुआ, सलाद तथा बन्दगोभी [illegible] गिनायी जा सकती हैं। सूँघने के लिए [illegible] लिप्टस की पत्तियाँ प्रमुख हैं। जरा [illegible] मसलने पर यूकेलिप्टस आयल की सु[illegible] देती हैं। रंग जमाने वाली पत्ती मेंहदी [illegible] है। इसकी पिसाई-घुटाई जितनी बा[illegible] होगी, रंग उतना ही गहरा निखरे[illegible] इसकी भी सुगन्ध बड़ी मोहक है।

कुछेक पत्तियों का औषधीय महत्त्व [illegible] बहुत होता है। नीम की पत्ती तीव्र [illegible] कीटाणुनाशक है। अतः इसका उपयो[illegible] पत्तियों को छाया में सुखाकर गर्म क[illegible] तथा अनाज को सुरक्षित रखने के लि[illegible] होता है। इसकी ताजा पत्तियाँ उबाल[illegible] उस पानी से नहाने पर चर्मरोग दूर [illegible] जाता है। तुलसी की पत्ती सर्दी, जुका[illegible] तथा पेट के रोगों में काम आती है। पथ[illegible]

तीन-पतिया घास की ये पत्तियाँ मुँदकर रात [illegible] विश्राम तो करती ही हैं, ओसकणों को भी [illegible] करके अपनी आर्द्रता अधिक देर तक बनाये रखती[illegible]

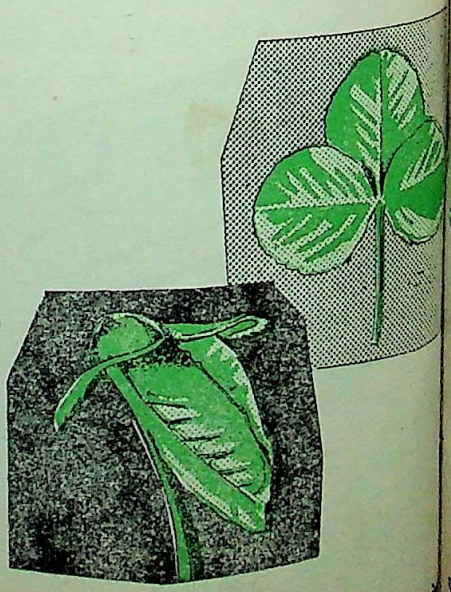



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

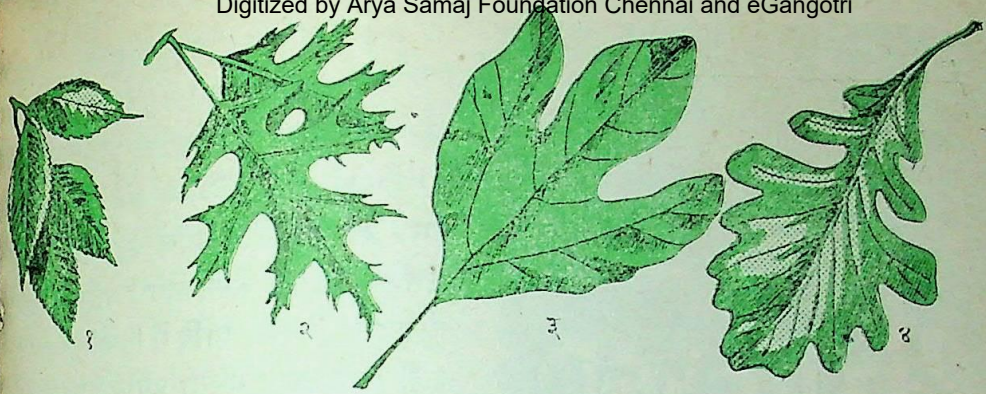


कुछ अनोखी पत्तियाँ : १. अमरीकन ऐल्म; २. रक्तिम ओक; ३. सासाफ्रास; तथा ४. बर ओक

बटे की पत्ती मुँहबन्द फोड़े तथा लिसौढ़े की पत्ती मुँह के छालों में काम आती हैं।

पत्तियों का परिचय प्राप्त कर लेने पर पेड़-पौधों को प्रथम दृष्टि में ही पहिचान लेना सरल हो जाता है। विभिन्न जाति के पेड़-पौधों की पत्तियाँ आकार-प्रकार में, रंग-रूप में तथा तने से संयुक्त होने के क्रम में स्पष्ट विभिन्नता लिये हुए होती हैं। किसी पत्ती को देखिए तो कोई नन्ही सुई जैसी तो कोई ऐसी विशाल, मानो कोठी का छप्पर ही हो! किसी को किनारी रेशम जैसी फिसलनी, तो किसी की दाँतेदार आरी जैसी, वह भी कहीं-कहीं इतनी पैनी कि घिस्सा लगे तो काटकर ही रख दे!

सामान्यत: एक वृक्ष में एक ही प्रकार की पत्तियाँ होनी चाहिए किन्तु सुगन्ध तथा औषधीय गुणों से युक्त सासाफ्रास (Sassafras) ऐसा वृक्ष है जिसमें पत्ते एक नहीं, दो-तीन प्रकार के मिलेंगे। शहतूत का वृक्ष भी प्राय: ऐसी ही विचित्रता लिये हुए होता है।

जिन्गो (ginkgo) वृक्ष की पत्ती खुले हुए पंखे जैसी चौड़ी तथा कटावदार होती है। इस वृक्ष की विलक्षणता वनस्पति-जगत में अन्य किसी में भी नहीं क्योंकि केवल यही वृक्ष ऐसा है जो प्रागैतिहासिक काल में भी था और आज भी है। इसीलिए इसे सजीवाश्म (living fossil) कहते हैं। ●

---

## समुद्र में तैरते प्लेटफार्म

अमरीका की आगामी अन्तरिक्ष योजनाओं में तैरते हुए प्लेटफार्म बहुत उपयोगी रहेंगे। अमरीका के जनरल डिनेमिक्स कार्पोरेशन ने घोषित किया है कि ऐसे प्लेटफार्म वह कम्पनी बना सकेगी जो एक प्रकार से चलते-फिरते द्वीप का काम दे सकेंगे। स्टेबल ओशन प्लेटफार्म नामक ये चल-द्वीप अन्तरिक्ष-यानों तथा दूरगामी पक्षेप्यास्त्रों की उड़ानों के लिए टोहक-केन्द्रों के रूप में प्रयुक्त किये जा सकेंगे। अभी तक इन कार्यों के लिए बड़े-बड़े जलपोत ही काम आते थे, किन्तु प्राय: ही उनके संतुलन बिगड़ जाते थे। वह कठिनाई इन प्लेटफार्मों में न होगी तथा ये सुरक्षित और कम खर्चीले भी रहेंगे।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# द्रव द्वारा यंत्र-संचालन

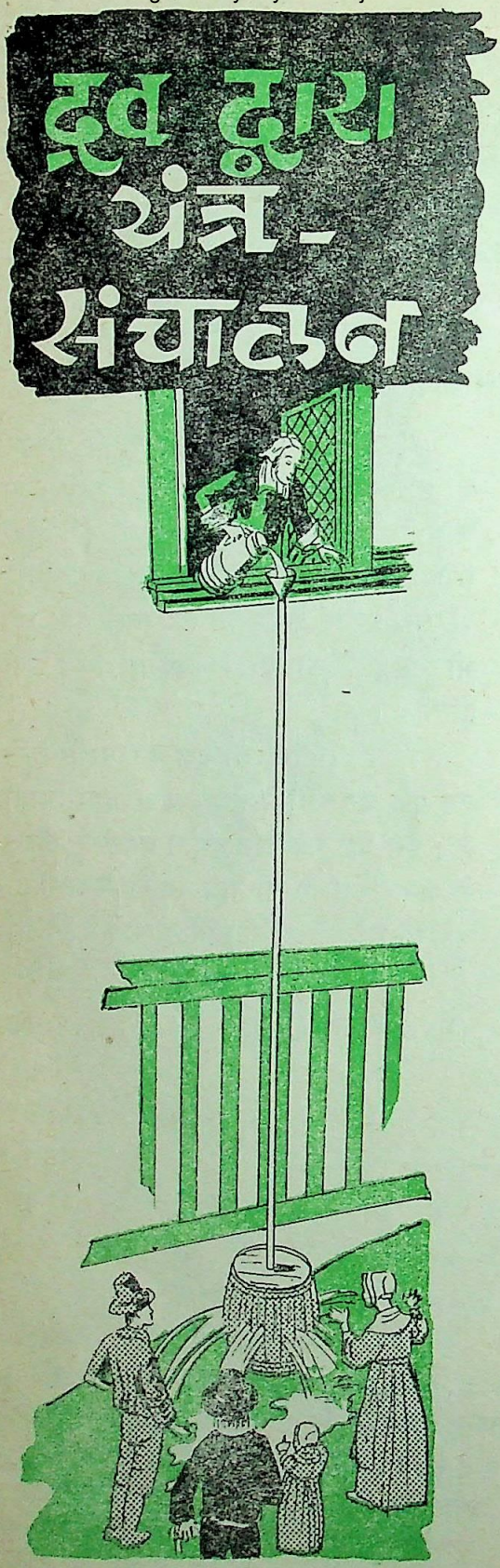

राजेन्द्रप्रसाद गर्ग

"थोड़ा पानी और दीजिए, मैं [illegible] भरे पीपे को तोड़कर दिखा दूंगा [illegible] फ्रेन्च वैज्ञानिक और प्रसिद्ध दार्शनिक पास्कल (Pascal 1623-62) ने जब अपने सहयो[illegible] अन्य वैज्ञानिकों के बीच यह कहा तब [illegible] उसका उपहास करने लगे। पास्कल ऐसे [illegible] हास और विरोध आदि से विचलित होने [illegible] नहीं था। उसने अपना प्रयोग दिखाने के [illegible] निश्चित दिन और समय पर सबों को नि[illegible] न्त्रित कर लिया। लकड़ी का एक मज़[illegible] पीपा पानी से भरकर अपने मकान की दीव[illegible] से सटाकर ऊँची खिड़की के नीचे रख[illegible] दिया। ढक्कन के बीचोबीच एक इंच मोट[illegible] १२ फुट लम्बा पाइप का एक सिरा प्रवे[illegible] करा दिया। पीपे और ढक्कन को चार[illegible] ओर ठीक से सीलबन्द कर दिया। तत्पश्चा[illegible] खिड़की पर से पाइप के दूसरे सिरे में ए[illegible] जग से थोड़ा ही पानी डाला कि पीप[illegible] तड़ाक से फट गया और पानी बह निकला।

## हाइड्रालिक्स

पास्कल ने जल-शक्ति के इस विज्ञान [illegible] नाम हाइड्रालिक्स रखा। ग्रीक शब्द हाइड्रास (*hydras*) अर्थात् जल और आलस (*aulos*) अर्थात् नली शब्दों से हाइड्रालिक्स शब्द बना है। इसका सिद्धान्त पास्कल ने इस प्रकार प्रस्तुत किया।

'चारों ओर से बन्द, एक पात्र में भरे पानी की सतह के किसी भी भाग पर दिया गया दबाव पूरी सतह पर समान भाग में बँट जाएगा।'

इसे 'पास्कल-सिद्धान्त' कहा गया। इ[illegible] और भी सरलता से इस प्रकार समझा [illegible] सकता है।

सामान्यतः किसी भी तरल पदार्थ [illegible] किसी बन्द पात्र में तब तक चापित [illegible] किया जा सकता जब तक उस पर अ[illegible]



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धारण दाब न दी जाए; क्योंकि किसी भी अन्य अवस्था की अपेक्षा केवल द्रवावस्था में ही पदार्थ के अणु अधिक से अधिक संयोजित रहते हैं। उदाहरणार्थ यदि एक नली को पानी से भरते ही जाएँ तो वह समस्त भाग बाहर निकल जाएगा जो अतिरिक्त रूप से उसमें भरा गया था। इसी का परिवर्तित रूप निम्न उदाहरण में देखें।

U के आकार की दो समान भुजाओं युक्त पानी से भरी नली के एक सिरे पर यदि १० इंच पानी और डालें तो दूसरे सिरे से १० इंच ही पानी बाहर निकल जाएगा। उसी पानी को यदि एक पम्प द्वारा १० पौण्ड दाब देकर दबाया जाए तो दूसरे सिरे पर रखे हुए १० पौण्ड वजन को वह पानी ऊँचा उठा देगा। उसी दूसरे सिरे को यदि दो समान भुजाओं में बाँटकर उन पर १०-१० पौण्ड वजन रखे जाएँ तो पहले की ही भाँति चापित किया हुआ १० पौण्ड दाब का पानी इस बार दोनों वजनों को अर्थात् २० पौण्ड वजन को १० इंच नहीं, केवल ५ इंच ऊपर उठाएगा। इसी प्रकार दो के स्थान पर चार वजन रख दिये जाएँ तो ५ नहीं, २॥ इंच ही ऊँचा उठाएगा।

### द्रव-संचालित मशीनें

यह सिद्धान्त आज के यंत्र युग में बड़ा लाभप्रद सिद्ध हो रहा है। जहाँ बड़े भार ढोने के कार्य हों वहाँ इसी का सहारा लिया जाता है। मिलों में कपड़ा तथा सूत की गाँठें बाँधने के भारी-भरकम प्रेस, वर्कशाप में कारों तथा ट्रकों को अधर उठाना, मालवाहक ट्रक के पिछले भाग को उलटकर ट्रक खाली कर देना आदि ऐसे ही कार्य हैं जिनमें अत्यधिक दाब तथा शक्ति की आवश्यकता पड़ती है। ऐसे कार्यों को थोड़ी ही शक्ति के व्यय से सम्पन्न करने में हाइड्रालिक्स का सिद्धान्त काम आता है।

आधुनिक कार की हाइड्रालिक ब्रेक

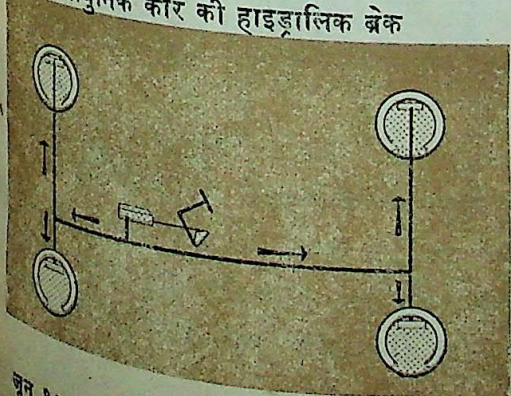

### मोटर कार की ब्रेकें

आधुनिक कारों में द्रव-संचालित ब्रेकें ही अधिक क्षमतायुक्त पायी गयी हैं। ब्रेक-पैडिल का सम्पर्क तेल की एक छोटी-सी टंकी से रहता है। ब्रेक के दबते ही टंकी से तेल निकलकर पाइपों द्वारा चारों पहियों में बँट जाता है। वह दाबयुक्त तेल पहियों में लगी ब्रेक-लाइनिंग को फैला देता है। फलस्वरूप ब्रेक-ड्रम पहियों से स्पर्श करते, दबाते हुए पहियों की गति को रोक देते हैं। ब्रेक-पैडिल छोड़ देने पर वही तेल पुनः टंकी में लौट आता है और पहिये पुनः घूमने को स्वतंत्र हो जाते हैं।

### द्रव-संचालित जैक

इसी प्रकार कार तथा ट्रक आदि को उठाने के लिए जैक बनाये जाते हैं। तेल एक बड़े सिलिण्डर में एक पम्प द्वारा चापित किया जाता है। वह निर्धारित दाबयुक्त तेल सिलिण्डर में भर जाता है तभी उससे सम्बन्धित हैण्डिल ऊँचा उठकर अपने ऊपर रखे भार को उठा देता है।

### जल-संचालित एलीवेटर

भवन-निर्माण में कहीं-कहीं लिफ्ट भी इसी सिद्धान्त पर बनाये जाते हैं। भवन के तहखाने में एक कुआँ उस गहराई तक खोदते हैं जिस ऊँचाई तक लिफ्ट ले जाना हो। उस कुएँ में पिस्टनयुक्त एक सिलिण्डर बिठाया जाता है। सिलिण्डर के ऊपर लिफ्ट



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

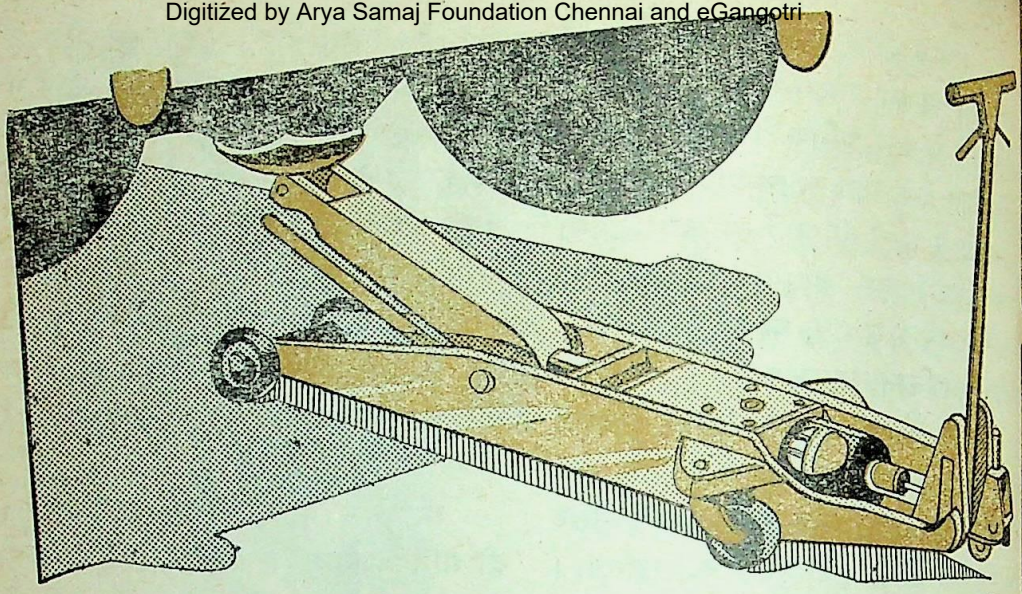

हस्तचालित, छोटा हाइड्रालिक जैक

रखी जाती है। ज्यों-ज्यों पिस्टन के जोर से सिलिण्डर में पानी भरता जाता है, वह लिफ्ट को ऊपर उठाता जाता है। इसी प्रकार लिफ्ट को नीचे उतारने के समय पानी की मात्रा घटाते जाते हैं।

### हाइड्रालिक प्रेस

यह प्रेस भी अत्यन्त उपयोगी है। चित्रांकित उदाहरण से स्पष्ट हो जाएगा कि पिस्टन का १ वर्ग इंच का प्लन्जर १०० पौण्ड दाब सहित पानी को नीचे दबाता है। वह सिलिण्डर नीचे की ओर से दूसरे ऐसे सिलिण्डर से संयुक्त रहता है जिसका प्लन्जर ९०० वर्ग इंच का है। पानी की दाब दोनों प्लन्जरों पर एक समान अर्थात् १०० पौण्ड प्रति वर्ग इंच की होने के कारण बड़ा प्लन्जर जो ९०० गुना अधिक विस्तार का है, ९००० पौण्ड की दाब उत्पन्न कर सकेगा, अर्थात् इतना भारी वजन उठा सकेगा।

ऐसा ही एक अन्य हाइड्रालिक प्रेस धातुओं की भारी, मोटी चद्दरों को विभिन्न आकारों में मोड़ने के लिए काम आता है। इस प्रकार हाइड्रालिक्स के आधार पर बनाये जा रहे यंत्रों की शृंखला काफी लम्बी है और उस शृंखला में नित नयी कड़ियाँ जुड़ती ही जा रही हैं।

हाइड्रालिक प्रेस : दायीं ओर के बड़े पिस्टन को नीचे के पानी द्वारा उठाया जाता है। इसी के ऊपर दबने वाली वस्तु रखी जाती है। बायीं ओर छोटे पिस्टन द्वारा पानी चापित किया जाता है

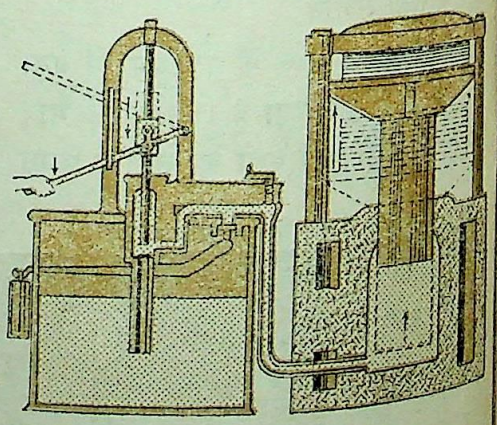



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

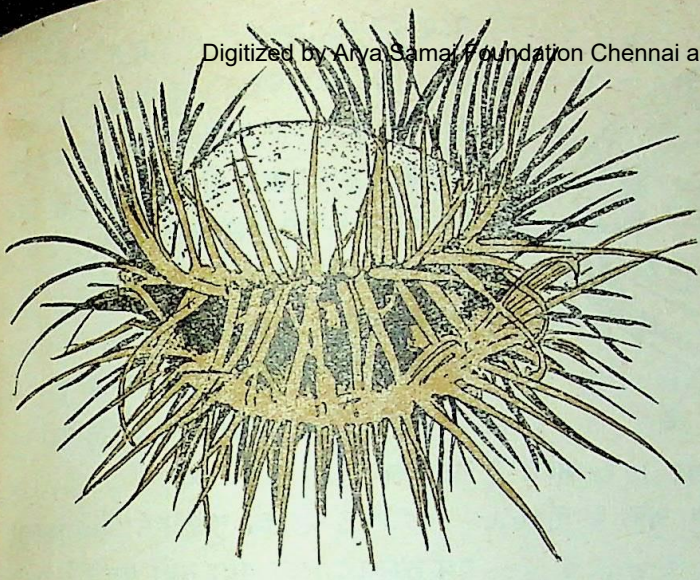

# मुझे सीपी कहते हैं

जगदीशप्रसाद अग्रवाल

"आज मेरी आपसे पहली मुलाकात नहीं। पहले भी मुझसे आपकी भेंट होती रही है। सुबह ही तो मन्दिर में आपने मेरी गोद से चन्दन लेकर माथे पर लगाया था! आज नायलान के बटनों के आगे भले ही आप मुझे भूल चले हों, परन्तु उससे पहले तो मेरे ही बने बटन आपके वस्त्रों की शोभा बढ़ाते थे! आपके कमरों के फर्श पर मेरा ही चूरा चमकता है और वैद्यराज भी मुझी को पीसकर दवा के रूप में रोगियों को देते हैं। ललित कला-प्रेमी सज्जन भी मेरा बहुत आदर करते हैं। मेरे ऊपर सुंदर-सुंदर रंगों की कूची फेरकर अपने ड्राइंग रूम में सजाकर रखते हैं।"

मैंने कहा—"यह सब तो तुम्हारे कठोर कवच की करामात है।"

"यही तो,"—वह बोली। "ऊपर से हम जितने कठोर हैं, अन्दर से उतने ही कोमल भी हैं। सच पूछो तो तीन परत का यह कोट हमने शत्रुओं से अपनी रक्षा करने के लिए ही पहन रखा है। वैसे भी पक्षी और अन्य जल-जन्तु हमें टिकने नहीं देते। चूने से बनाया हुआ यह बाना भी यदि हम उतार फेंकें तो आये दिन सर्दी-गर्मी और हवा-पानी के झोंके हमारा जीना ही मुश्किल कर दें।"

मैंने बीच ही में कहा—"कुछ कीड़े-मकोड़ों के कवच तुम्हारे कवच से कहीं लचकदार होते हैं।"

"यह तो ठीक है, पर हमारे कवच जैसी सुन्दरता उनके खोल में कहाँ!" सीपी गर्व से बोली—"हमारे कवच के चमकदार अस्तर जैसा उनके पास कुछ भी नहीं है। पानी में घुले ह्यूमिक (humic) और कार्बनिक (carbonic) अम्लों से हम अपने कवच की बाहरी परत में भी चमक पैदा कर लेते हैं। शिशु अवस्था से ही हम इसे शरीर पर मढ़ना शुरू कर देते हैं ज्यों-ज्यों शरीर बढ़ता है, पानी में घुले हुए चूने की मदद से कवच और नीचे का अस्तर (mantle) बढ़ता रहता है। कवच के बाहर की धारियाँ इसकी आयु के चिह्न हैं।"

"सीपी रानी, तुम रहती कहाँ हो?" मैंने पूछा।

"अरे, यह तो बताना भूल ही गयी! नदी, नाले और बहते हुए जल में भी मुझे पा सकोगे। मेरे अनेक कुटुम्बीजन समुद्र के खारे जल को भी पसन्द करते हैं। मुझे पोखर-



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

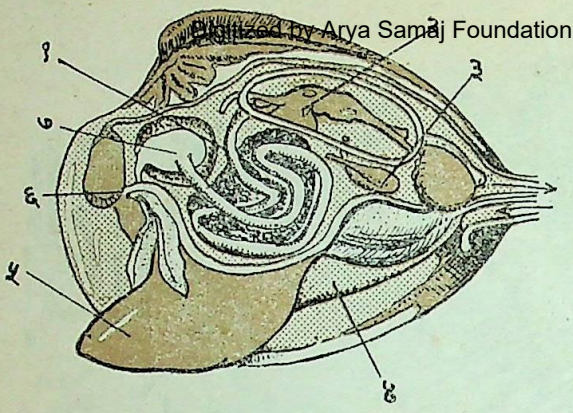


द्वि-कोशीय सीपी के आन्तरिक भाग : १. आंतें; २. हृदय; ३. गुर्दा; ४. खोल; ५. पाँव; ६. मुँह; ७. पेट

तालाब का रुका हुआ पानी नहीं सुहाता। वहाँ तो मेरा दम घुटने लगता है।"

"खाती-पीती क्या हो ?"

"पानी की सूक्ष्म वनस्पतियाँ और जन्तु जिन्हें आप सूक्ष्मदर्शी के बगैर नहीं देख सकते, उन्हें मैं अपना भोजन बनाती हूँ। इधर देखिये, दो दरवाजे नजर आते होंगे !"

"हाँ, निचले दरवाजे पर तो सुन्दर झालर-सी भी दिखाई दे रही है।"

"ठीक है, मैं इसी के द्वारा पानी पीती हूँ और ऊपर वाले दरवाजे से निकालती रहती हूँ। जरा रुकना, बड़ी प्यास लगी है। कभी-कभी तो लगता है मानो प्यास बुझेगी ही नहीं।"

मुझे शरारत सूझी। हलकी नोक की तरह का माँस का टुकड़ा जो कवच के बाहर निकल रहा था, उसे छूकर पूछा—"यह क्या है ?"

"यही तो शरारत है !" कहकर सीपी ने उसे झटके से भीतर कर लिया। खुले हुए कवच का मुँह कसकर बन्द हो गया। फिर झुंझलाती हुई बोली—"यह हमें पसन्द नहीं। यह हमारा पाँव है। आज तुमने पाँव को हाथ लगाया इसलिए छोड़े देती हूँ। इस पाँव की सहायता से कीचड़ और दलदल में हम अपना रास्ता तय करते हैं। यह हमारे शरीर का सबसे सुदृढ़ भाग है। संकट पड़ने पर कछुए की तरह हम अपने अंगों को न सिकोड़ें तो कैसे काम चले ? जब तक खतरा दूर नहीं हो जाता, हम अपने खोल में ही दुबके रहते हैं। इस कवच को खोलने और बन्द करने के लिए सुदृढ़ तन्तु भी हैं।"

मैंने कहा—"तुम्हारा जीवन बड़ा सेवा-मय है।"

"फिर भी तो तुम हमें नहीं छोड़ते। हम तुम्हारे लिए क्या नहीं करते ? तुम्हारी नदियों के पानी को जन्तुरहित करके साफ रखते हैं। तुम्हारे उपभोग के लिए सर्वस्व बलिदान करते हैं। सबसे बढ़कर तो तुम्हें मोती हमीं से मिलते हैं। और, तुम हो कि अपनी तो अपनी, मछलियों तक की भूख मिटाने के लिए उनके मुँह में हमें पकड़-पकड़ कर झोंक देते हो !"

"यह तो तुम ठीक कहती हो"—सलज्ज मैंने स्वीकार किया।

"तुम्हें शायद पता नहीं, मोती पैदा करना हमारे लिए कितनी कष्ट-साध्य साधना है। जब हमारे शरीर में कोई परोपकारी जीवी साधारणतः फ्लूक (fluke) के विकासक्रम की कोई अवस्था प्रवेश कर जाती है तो उसकी जलन और कुरेद से हमारा शरीर परेशान हो जाता है ! वहीं से मोती बनना शुरू हो जाता है। यदि तुम्हारे शरीर के कोष-समूह (tissue) में इस प्रकार की कुरेद-बुन शुरू हो जाए तो तुम्हें चैन ही न पड़े और कैंसर तक के लक्षण शुरू हो जाएँ।"

मैंने फिर कहा—"यह तो प्राकृतिक बात है। हम जानबूझ....."

".....क्या नहीं करते ? कल्चर मोती बनाने वालों को नहीं देखा आपने ? वे हमारे शरीर में तरह-तरह के जीवों को प्रवेश करा



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर हमें मोती उगलने को बाध्य करते हैं। कई बार तो खुदी हुई मूर्तियाँ या सादा पत्थर के टुकड़े हमारे शरीर में धँसा देते हैं। मोती के लिए हमें ३-४ वर्ष तक कष्ट झेलने पड़ते हैं। बड़े मोती के लिए तो कभी-कभी ६-७ वर्ष भी लग जाते हैं।"

"सुना है, मोती तो आपके मुँह में स्वाति नक्षत्र में वर्षा की बूँद से बनता है।"

"आपके कवियों को और सूझता ही क्या है? इसी बहाने आप हमारे प्रति अपनी क्रूरता को छिपाने के लिए जो न करें वह थोड़ा ही है।"

मैं कुछ न बोल सका। सीपी ने ही बात आगे बढ़ायी—"एक घण्टे में हम करीब ढाई लिटर पानी सोख लेते हैं। पानी में घुला हुआ आक्सीजन हमारे श्वसन में काम आता है। शरीर के दोनों ओर जुड़ी चार थैलियाँ अपने छिद्रों से पानी सोख लेती हैं। छोटे-छोटे जन्तु जो पानी के साथ शरीर में चले आते हैं, मुँह की ओर आगे ढकेल दिये जाते हैं। हम भी अच्छे-बुरे भोजन की पहिचान कर लेते हैं। हमारे पेट में छोटी आँत की ओर लटकता हुआ एक टुकड़ा होता है जिसे क्रिस्टेलाइन स्टाइल (crystalline style) कहते हैं। उससे हमें भोजन पचाने में सहायता मिलती है। हमारा हृदय मलाशय (rectum) को चारों ओर से घेरे हुए है। हमारे जननांग भी हमारी आँतों के कुण्डल में जमे रहते हैं। केवल बाहर देखकर हमारे नर मादा का अन्तर करना बड़ा कठिन है।"

मैंने झिझककर पूछा—"मैं तो तुम्हें सीपी रानी कहता आया हूँ। आप....?"

सीपी इस अप्रत्याशित प्रश्न पर शरमा कर रह गयी।

मैंने कहा—"शरमाइए नहीं। अपना सिर ऊपर उठाइए, आँखें मिलाइए!"

इस बार सीपी हँस पड़ी। कहने लगी—"आपने ठीक अन्दाजा लगाया है, मगर न तो मेरे सिर है और न आँख। मेरा रक्त भी रंगहीन है; नहीं तो शायद उसी की लाली देखकर आपको मेरी लज्जा का आभास होता! हाँ, कुछ कोष समूह अवश्य ऐसे हैं जो प्रकाश और अंधकार का भेद कर सकते हैं। आप चाहें तो उन्हीं को ज्ञानेन्द्रिय कह सकते हैं। यों तो शरीर के सन्तुलन और पानी में विजातीय द्रव्यों की पहचान के लिए भी मेरे पास ज्ञानेन्द्रियाँ हैं।"

"मैंने सुना है कि आप एक बार में लाखों अण्डे देती हैं। इतनी बड़ी फौज खड़ी करके क्या आपने इनसान से बदला लेने की सोची है? क्या आपको भोजन की समस्या नहीं सताती?"

"सभी अण्डे कहाँ पनप पाते हैं! कितने ही तो लालची शत्रुओं का शिकार हो जाते हैं और बहुत से अण्डे पानी में डूब जाते हैं। हमारे सागरनिवासी साथियों में अण्डों का निषेचन अथाह जल में ही होता है। अतः वहाँ तो नर-बीजों के साथ अण्डों का संयोग केवल किस्मत की बात है। हम

**सुन्दर आकृति पाने की जल्दबाजी में सीपी कभी-कभी असंतुलित होकर ऐसे विकृत आकार भी प्राप्त कर लेती है**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

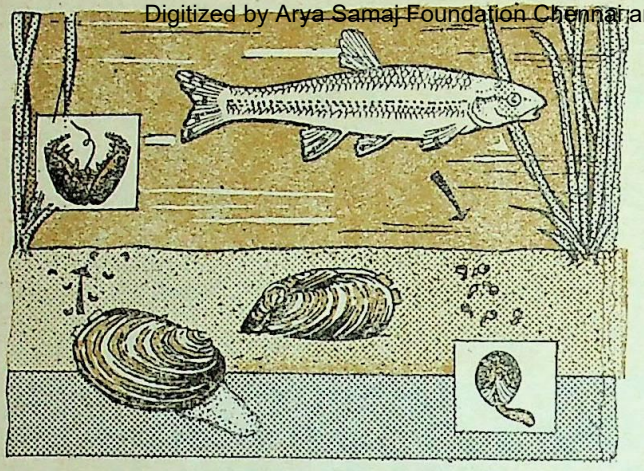

ताजे पानी की सीपी (fresh-water clam) का जीवनक्रम

नदी-नालों में रहती हैं। हमें निषेचन क्रिया को शरीर के अन्दर ही सम्पन्न करनी पड़ती है। अगस्त में हम अपने अण्डों को साँस लेने वाली थैलियों के बीच टिकाये रखते हैं और सर्दी भर उन्हें बाहर नहीं निकलने देते। जब अण्डों से गिराड़ (larvae) बन जाते हैं तब वे अपने कवच के दोनों टुकड़ों से तैरने लायक हो जाते हैं। उनके तन्तु विकसित हो जाते हैं और कवच के कोनों पर लम्बे-लम्बे काँटे निकल आते हैं। उन

[illegible] की मदद से वे किसी [illegible] के गलफड़ों (gills) या बाज [illegible] के साथ चिपटकर तब तक [illegible] जीवी जीवन बिताते हैं जब [illegible] आत्मनिर्भर न हो जाएँ। कभी-[illegible] मछली की ऐसी सवारी करके नन्हे-मुन्ने दूर-दूर की सैर [illegible] निकल जाते हैं और वहीं बस [illegible] जाते हैं। वे बच्चे ३-४ सप्ताह [illegible] लेकर कई सप्ताह तक इसी प्र[illegible] मछलियों के अतिथि रहते हैं। [illegible] भी हमारी कई जातियों ने [illegible] और बुराई माना है। अतः वे [illegible] बच्चों का लालन-पालन अपने शरीर [illegible] अन्दर ही कर लेते हैं।"

सीपी को इतनी देर तक पानी के [illegible] बातें करते देख, एक नन्हे पक्षी के मुँ[illegible] पानी भर आया। चोंच खोलकर ज्यों [illegible] वह सीपी को पकड़ने के लिए झपटा, [illegible] रानी उसकी चोंच को अपने कवच के [illegible] टुकड़ों में चिमटे की तरह पकड़कर पानी [illegible] नीचे गायब हो गयी !

---

## बर्फ की चट्टान में कितना पानी ?

सर्दियों के बाद पहाड़ों की बर्फ पिघलने पर कितना पानी मिलेगा, इसका पूर्व अनुमान [illegible] अत्यन्त महत्त्व का है। मौसम के भविष्यवक्ताओं, नदियों के यातायात उद्योग-संस्थानों तथा किसानों [illegible] लिए इस पूर्वज्ञान की बड़ी उपयोगिता है। सोवियत वैज्ञानिकों द्वारा प्रस्तुत गामा स्नो-मीटर [illegible] ३ मीटर तक मोटी बर्फ की परत गामा किरणें प्रविष्ट करके उससे प्राप्त होने वाले जल का पूर्व [illegible] मान तुरन्त और सही रूप में दे देता है।

## जंगल में मंगल

सोवियत मध्य-एशिया की चू नदी के किनारे, मीलों लम्बे-चौड़े जंगल ही जंगल में मनुष्य [illegible] श्रम से मंगल-मोद ला देने को कटिबद्ध है। शीघ्र ही किसी समय का वह बीहड़ जंगल, एक लाख जनसंख्या का और सीमेण्ट तथा अन्य बड़े उद्योगों से गुँजरित नगर बन जाएगा।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

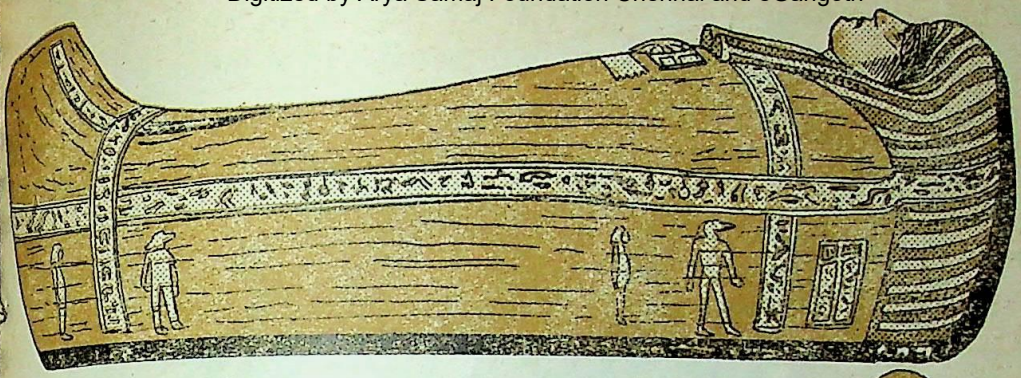

# प्राचीन मिस्र के शव.... ममी

**दीनानाथ भार्गव**

प्राचीन मिस्रवासियों द्वारा ममी का उपयोग मृत शरीरों के लिए किया जाता था जिन्हें वे लेप आदि लगाकर सुरक्षित रखते थे। ऐसी असंख्य ममियाँ मेम्फिस (Memphis) के निकट सकारा (Saccara) के मैदान में मिली हैं। अतः इस मैदान को 'ममियों का मैदान' भी कहा जाता है। वहाँ पायी जाने वाली ममियाँ केवल मनुष्यों की ही नहीं, बैल, लंगूर, सारस मगरमच्छ और मछलियों तक की भी हैं। अनुमान है कि ईसा से ३००० वर्ष पूर्व से रोमनकाल तक लगभग ७३ करोड़ व्यक्तियों की ममियाँ बनायी गयी होंगी।

सम्राट फेरोह (Pharaoh) की कब्र दिसम्बर १९२२ में 'राजाओं की घाटी' में मिली थी। उसकी ममी एक के अन्दर एक यों तीन पेटियों के भीतर पायी गयी थी। सबसे अन्दर की पेटी ठोस सोने की थी जिसे आठ आदमी बड़ी कठिनाई से उठा सके थे। शव के सिर और कंधों पर सोने का पतरा चढ़ा हुआ था जिसमें मूल्यवान मणि-मुक्ता जड़ी हुई थीं। शव के साथ नित्यप्रति काम में आने वाली वस्तुएँ, संगमरमर के बर्तन, पलंग, कुर्सियाँ, रथ, सोने की अँगूठियाँ, कपड़े, चित्र और मूर्तियों आदि का अमूल्य संग्रह भी उस कब्र में मिला था।

प्रश्न हो सकता है कि वे इस प्रकार के

**कब्रों से प्राप्त वस्तुओं में यह दर्पण भी सम्मिलित है**

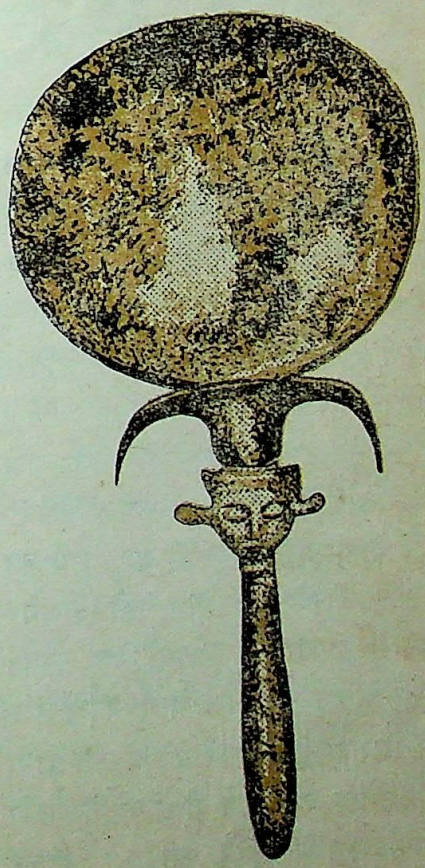



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदि-मानव, शव को जानवरों की खाल में लपेटकर धरती में गाड़ देता था

विचित्र तरीके क्यों अपनाते थे ? क्यों वे मृतक देह पर लेप इत्यादि करके उसे उसके दैनिक उपयोग की वस्तुओं के साथ ममी बनाकर दफना देते थे ? कदाचित इसका कारण शरीर की अनश्वरता के प्रति उनका विश्वास था।

प्रागैतिहासिक काल में मृतक व्यक्ति को खाल आदि में लपेटकर उथले और छोटे गड्ढे में गाड़ दिया जाता था। सूर्य का ताप और तप्त शुष्क रेत शव को गलने और सड़ने से रोकते थे। प्रायः केश, त्वचा तथा शरीर के अन्य कोमल भाग सुरक्षित भी रह जाते थे। मिस्रवासियों को प्रकृति द्वारा शव-संरक्षण का पता उन शवों को देखने से लगा जिनको कब्र के लुटेरे खोदकर बाहर छोड़ जाते थे। शव के इस संरक्षण ने ही कदाचित उन्हें यह मानने को प्रेरित किया कि मृत्यु के पश्चात् भी भौतिक जीवन शेष रहता है। शव के साथ बर्तन, कपड़े तथा अन्य वस्तुओं को भी इसी मान्यतावश रख दिया जाता था कि वह उन वस्तुओं का उपयोग उस नये लोक में उपभोग कर सके। ज्यों वस्तुओं की संख्या बढ़ती गयी, कब्र को बड़ी बनाते जाना पड़ा। उन लम्बी चौड़ी कब्रों में शवों को शुष्क रखने के लिए तप्त रेत सम्पर्क में नहीं आ पाती थी। शीघ्र ही थे शव गलने और सड़ने लगते थे। फलतः उनका उद्देश्य नष्ट हो गया था, क्योंकि मृत व्यक्ति उन वस्तुओं का उपभोग कर ही नहीं पाता था। इसलिए



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देह सुरक्षित रखने के साधनों की खोज की जाने लगी। उन प्रयोगों के मध्य ही ममी बनाने की कला का जन्म हुआ। वन्य पशुओं और कब्र के लुटेरों से शवों को बचाने के लिए पिरामिड सरीखे दृढ़ और पक्के मकबरे बनाये जाने लगे।

आरम्भ में ममी बनाना केवल फेरोह राजवंश का ही जन्मसिद्ध अधिकार माना जाता था। मृत व्यक्ति और मृत्यु के देवता के मध्य उसी राजवंश का व्यक्ति मध्यस्थ माना जाता था। उस राजवंश की पाँचवीं पीढ़ी तक लेपन द्वारा शव-संरक्षण की प्रथा समाज में फैल गयी। प्राप्त प्रमाणों से ज्ञात होता है कि शव-लेपन एक सम्मानित कला माना जाता था। यह ज्ञान पीढ़ी दर पीढ़ी वंशजों को मिलता रहता था। ममी बनाना काफी मँहगा भी पड़ता था। अतः व्यक्ति की आर्थिक स्थिति के अनुसार ममी बनाने की अनेक विधियाँ प्रचलित थीं।

### मँहगी विधि

मृत देह को ओषधियों का इन्जेक्शन लगाकर धातु की एक मुड़ी हुई छड़ के द्वारा मस्तिष्क का भीतरी भाग निकाल लिया जाता था। तत्पश्चात् एक लिपिक शव के बायीं ओर बगल के नीचे लगभग चार इंच लम्बी एक रेखा स्याही से खींच देता था। दूसरा व्यक्ति फ्लिण्ट पत्थर की नोक से उस रेखा के सहारे चीरा लगा देता था। चीरे के मार्ग से हृदय को छोड़कर शेष समस्त भीतरी अंग बाहर निकाल लिये जाते थे और उन्हें चार कलशों में भर देते थे। प्रत्येक कलश एक-एक देवता को समर्पित करके कब्र में रख दिया जाता था। खोखली देह को नारियल के तेल से धोकर उसमें लोबान, दालचीनी आदि मसाले भर दिये जाते थे। एक बड़े बर्तन में नमक अथवा शोरे का घोल भरकर शव को इस प्रकार दोहरा रखा जाता था कि घोल की सतह से केवल सिर ऊपर निकला रहे। उस घोल में शव कई सप्ताह तक पड़ा रहता था। इस अवधि में चर्बी युक्त पदार्थ घुल जाता था और सिर को छोड़कर शरीर के शेष भाग से खाल उधड़ जाती थी। तत्पश्चात् देह को बाहर निकालकर सुगन्धित तेलों से धोया जाता था और उसे सीधा करके सुखा लिया जाता था। सूखने पर उसमें राल आदि में भिगोये हुए कपड़े तथा सुगन्धित लकड़ी का बुरादा भर दिया जाता था। मृतक के सिर का एक ढाँचा भी बनाया जाता था जिसे मृतक देह के साथ रालयुक्त पट्टियों द्वारा बाँध दिया जाता था। कुछ ममियों पर १२००-१५०० फुट लम्बी पट्टियाँ बँधी हुई पायी गयी हैं। उपरोक्त कार्यों में लगभग ७० दिन लगते थे। वह काल मृतक के सम्बन्धियों के लिए शोक मनाने का काल होता था। वे उन दिनों न तो स्नान करते थे और न मांस-मदिरा का सेवन ही करते थे।

प्राचीन मिस्र का परिधान

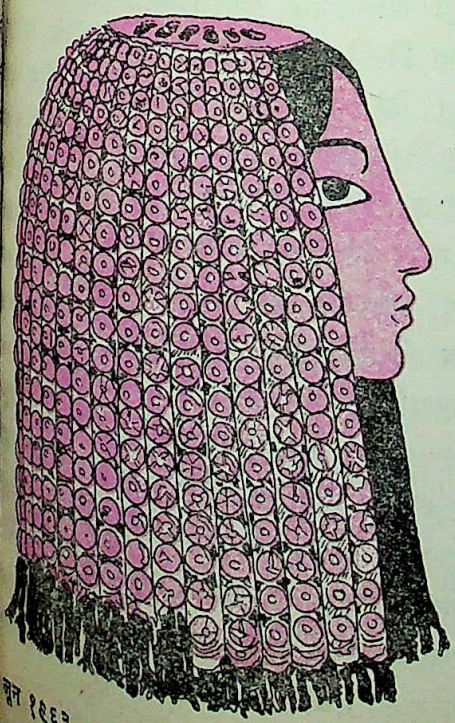



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुरक्षित ममी का एक नमूना

## सस्ती विधि

मध्यम वर्ग के व्यक्तियों के लिए एक सस्ती विधि भी अपनायी जाती थी। उस विधि में शव को चीरा नहीं जाता था। इन्जेक्शन द्वारा पहुँचाया हुआ देवदार का तेल देह के मांस को गलाकर अस्थियों को वैसा ही छोड़ देता था। तत्पश्चात् देह को शोरे के घोल में नहलाकर पट्टियों से बाँध दिया जाता था। गरीबों के शवों को यों ही धोकर शोरे के घोल में डुबो दिया जाता था और बाद में निकालकर पट्टियों से बाँध दिया जाता था।

२२वें राजवंश तक ममी बनाने की कला में काफी सुधार हो चुके थे और वह उन्नति के शिखर पर पहुँच चुकी थी। शव को कई स्थान से चीरकर खोखला कर लिया जाता था। तब उसमें रेत या मिट्टी भर दी जाती थी। रेत को इस प्रकार भरते थे कि शरीर की सिकुड़नें इत्यादि दूर हो जाएँ। उस स्थिति में वह जीवित देह जैसी लगती थी। आँखों के गड्ढों में नकली आँखें लगा दी जाती थीं। और हाथ पाँव की अँगुलियों पर सोने अथवा अन्य किसी धातु के पतरे चढ़ा दिये जाते थे। देह को नीचे से ऊपर तक गेरू से रंग दिया जाता था तथा होंठों और गालों पर लाली लगा दी जाती थी। कालान्तर में ममी बनाने की कला का ह्रास होने लगा तथा कृत्रिमता और सस्तापन आने लगा। शव की सुरक्षा की अपेक्षा बाहरी टीप-टाप पर अधिक ध्यान दिया जाने लगा।

कुछ ममियाँ हवा के सम्पर्क में आते ही खराब होने लगती हैं। ब्रिटिश म्यूजियम में रखी हुई एक ममी को कुछ वर्ष पहले पेनिसिलिन के इन्जेक्शन लगाकर सड़ने से रोका गया था। जो ममियाँ केवल नमक से तैयार की गयी थीं वे देखने में सफेद हैं तथा



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसा प्रतीत होता है कागज चढ़ाया हुआ हो। कुछ ममियों को जब खोला जाता है तो उनके टुकड़े-टुकड़े हो जाते हैं। कुछ ऐसी भी हैं जिनके हाथ-पाँव छूने पर अब भी कोमल और लचीले लगते हैं।

एक ममी पर सिर-पैर तक मुरझाये हुए फूलों की लम्बी मालाएँ पायी गयीं थीं। एक पतंगा उनकी सुगन्धि से आकर्षित होकर उसी में बन्द हो गया था। शताब्दियों बाद भी उसके पतले पारदर्शी पंख सुरक्षित पाये गये।

पैरू के उत्तर प्रशान्त तटवर्ती द्वीपों के आदिवासी अपने सम्बन्धियों के शवों को सुरक्षित रखते थे। वे ममियाँ सूखी, हलके पीले रंग की और तीव्र गन्धयुक्त होती थीं। शवों को वे बकरे की खाल में लपेटकर बक्स में बन्द कर देते थे। ब्रेमेन के गिरजे की छत में जिसको 'सीसे की कोठरी' कहते हैं प्रकृति द्वारा सुरक्षित कुछ शव रखे हैं। इसी प्रकार सेन्ट बर्नार्ड के मठ में उन यात्रियों के शव रखे हुए हैं जो कभी बर्फ में दब गये थे।

---

# धातु और संकर धातु

[पृष्ठ ३५ का शेष]

के डायलों को अँधेरे में चमकीला बनाने के लिए काम आता है।

बिजली के बल्बों में टेन्टेलम धातु के तारों का उपयोग टंगस्टन से पूर्व होता था। इस पर तीव्र से तीव्र अम्ल का भी प्रभाव नहीं होता, अतः इसके बने हुए बर्तन आदि पात्र तीव्र रासायनिक पदार्थ रखने के काम में आते हैं। यह धातु गैसों को भी पर्याप्त मात्रा में सोख लेती है।

वेनेडियम अत्यन्त उपयोगी धातु है। इस्पात से मिश्रित होकर यह उसे अत्यधिक मजबूत कर देता है। रेल के इंजन तथा अन्य भारी मशीनें बनाने के योग्य इस्पात में वेनेडियम होना आवश्यक है। वेनेडियम मिलाने से सोना भी कठोर हो जाता है। अतः उस मिश्रित धातु की स्वर्ण मुद्राएँ सरलता से बनायी जाती हैं। वेनेडियम एक उत्तम उत्प्रेरक भी है, अतः अनेक औषधियों में इसके लवण प्रयुक्त होते हैं।

ताँबे की कठोरता बढ़ाने के लिए बेरीलियम मिलाया जाता है। २·२५% बेरीलियम मिला देने से ताँबा पाँच गुना मजबूत हो जाता है। सामान्य पेट्रोल की टंकियों आदि की मरम्मत करते समय प्रायः दुर्घटनाएँ हो जाती थीं और लोहे की टंकियाँ फट जाती थीं। अब ताँबा और बेरीलियम युक्त धातु का उपयोग होता है। इसे सुरक्षित माना जाता है। टाइपराइटर तथा अन्य गणक यन्त्रों के स्प्रिंग इसी संकर धातु से बनाये जाते हैं।

---



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

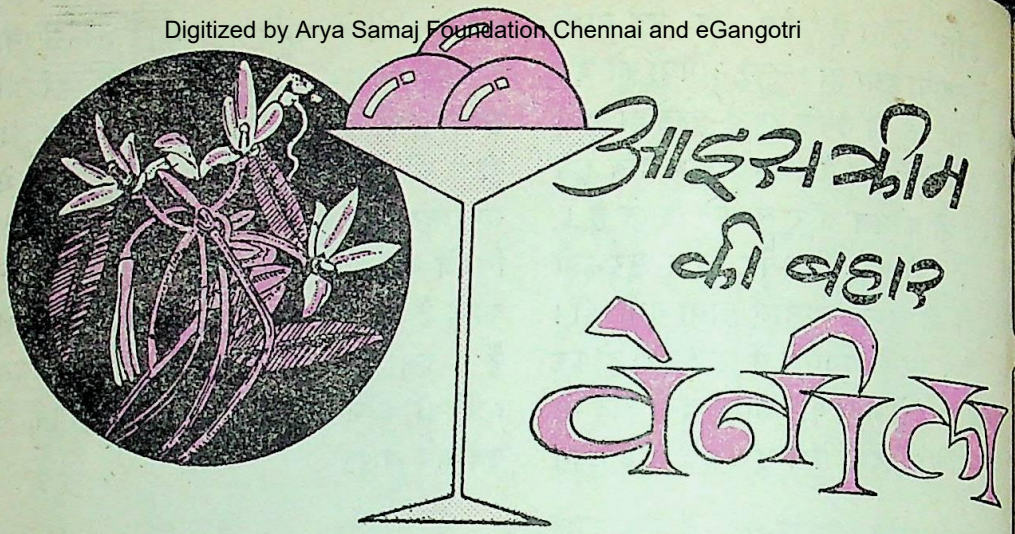


बांकेबिहारीलाल

आइसक्रीम की बहार और चाकलेट, पेस्ट्री आदि का आधार वेनीला एक प्रिय उपादान बन चुका है। आज से ३००-४०० वर्ष पूर्व इससे परिचय हुआ था। उस समय इसका उत्पादन केवल उत्तरी अमरीका के मैक्सिको प्रदेश में होता था। इससे परिचय प्राप्त करने का श्रेय स्पेनिश सेनापति हरनन कोर्ज (Hernan Cortez) को है। पहली ही चुस्की में वेनीला ने हरनन को मोह लिया था।

फिलिप द्वितीय के शासनकाल में (१५७१-७७) वेनीला ने स्पेन में प्रवेश किया। अनेक सुगन्धी विक्रेता एक नवीनता के रूप में इसकी फलियों को रखने लगे थे। इसकी फलियाँ एक छोटी कटार के म्यान जैसी होती हैं। इसीलिए स्पेनवासियों ने इसका नाम वेयनिला (*Vainillia*) अर्थात् 'छोटी म्यान' रख दिया।

### मैक्सिको ही क्यों ?

एलिजाबेथ प्रथम के एक राज्य-कर्मचारी क्लूसियस ने सोचा—'ऐसा अद्भुत पौधा अकेले मैक्सिको में ही क्यों पैदा हो? क्यों न दूसरे देशों में भी इसे उपजाकर एक अच्छी आय का साधन बनाया जाए?' इस प्रकार स्पर्धा का बीजारोपण हो गया। लेकिन वेनीला के बीज न मिले और कलमें लगाकर ही प्रयोग प्रारम्भ कर दिये गये। कलमें लगाने पर पौधे उगते, उनमें फूल भी लगते किन्तु फूलों का परागण न हो पाने के कारण सब मुर्झा जाते थे और मैक्सिको वासियों को यूरोपवासियों का उपहास करने का अवसर मिलता रहा। लगभग २०० वर्षों तक यही स्थिति बनी रही।

अन्ततः रहस्य का पता चल गया। फूलों को मैक्सिको में पायी जाने वाली डंकहीन मक्खियों तथा अन्य विशेष परिस्थितियों का अभाव रहता था। वे ही उनके परागण के मुख्य साधन थे। उन मक्खियों का प्राप्त करना सरल कार्य नहीं था। १८३६ में चार्ल्स मोरेन नामक एक व्यक्ति ने इसका भी हल खोज लिया। उसने वेनीला के एक पुष्प से परागकण लेकर दूसरे पुष्प के स्त्रीकेसर में स्थापित कर दिये। पुष्प-परागण सम्पन्न हो गया और छोटी बड़ी फलियाँ लगना प्रारम्भ हो गया। शीघ्र ही इस सफलता का प्रसार अन्य देशों में भी होते-होते फ्रान्स, ईस्ट इण्डीज, वेस्ट इण्डीज, मेडागास्कर आदि में वेनीला उगाया जाने



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगा। कुछ वर्षों पश्चात् वेनीला-कृषि में काम करने वाले एडमण्ड अल्बियस नामक एक श्रमिक ने परागण-क्रिया का नया ही ढंग खोज निकाला। वह ढंग इतना लोकप्रिय सिद्ध हुआ कि वेनीला प्रवर्तक मैक्सिको तक में अपनाया गया और उन्हें भी उस डंकहीन मक्खी की आवश्यकता न रही।

### सुगन्धित फलियों की बेल

वेनीला प्लेनिफोलिया (*Vanilla Planifolia*) श्रेणी की ही बेलें अधिकतर उगायी जाती हैं। तंग और लम्बी क्यारियों में उगती इसकी बेलों में एक-एक कली पर १५-२० तक फलियाँ लगती हैं। पुष्प-परागण में बड़ी कोमलता और कुशलता की आवश्यकता रहती है। मैक्सिको में पायी जाने वाली डंकहीन मक्खियाँ अन्यत्र तो होती नहीं। अतः कृत्रिम परागण के लिए महिला कृषकों से नर्सों का काम लिया जाता है। ज्यों-ज्यों कलियों, फूलों की पंखुरियाँ खुलती हैं, इन नर्सों का काम आरम्भ हो जाता है। इनकी आन्तर-रचना में वाल्व सरीखी एक ऐसी रोक होती है जो स्वपरागण नहीं होने देती।

हरी-भरी फलियोंयुक्त वेनीला

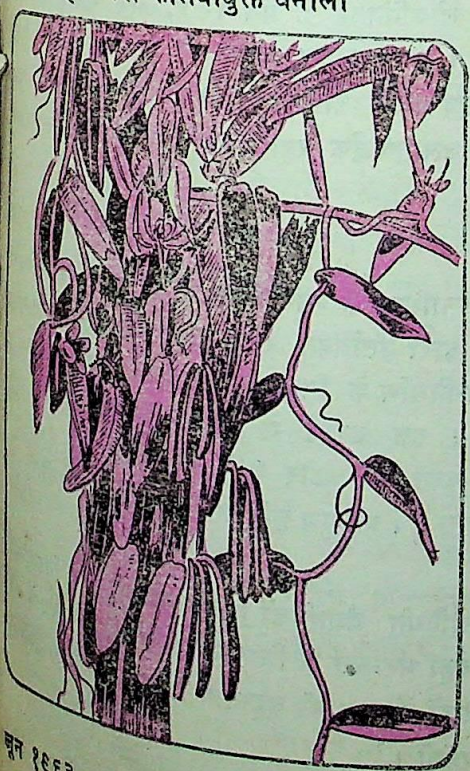

मुस्कराते फूलों की क्यारियों के बीच श्रमिक महिलाओं तथा बच्चों की टोलियाँ घूमती रहती हैं। बड़ी कोमलता से बाँस की तीली द्वारा एक फूल से कुछेक परागकण लेकर उसी फूल के स्त्रीकेसर में स्थापित कर देती हैं। वेनीला की बेल वर्ष में दो बार, लगातार दो मास तक फूल देती है। प्रत्येक फूल का जीवन केवल एक-एक दिन का होता है। अतः उपरोक्त विधि के अनुसार परागण उतनी ही अवधि में कर लेना आवश्यक है जब तक कि फूल ताजा-ताजा खिला रहे।

### फलियाँ चुन ली जाती हैं

शरद के प्रारम्भ में जिन बेलों का पुष्प-परागण हो चुका हो उनमें मार्च आते-आते फलियाँ आने लगती हैं। एक-एक गुच्छे में ४ से २० तक फलियाँ लटकती हैं। ६ से १० इंच तक लम्बी ये फलियाँ किंचित् हरे वर्ण की होते ही उतार ली जाती हैं। नित्य ही इनके चुनने में यह देखा जाता है कि न तो ये कच्ची रहें और न फट जाने लायक ही पक जाएँ। फलियों को तने के कुछ भाग सहित ही तोड़ा जाता है क्योंकि फली का बिलकुल साबूत और मुँह बन्द होना बहुत जरूरी है। कच्ची फली को चखने पर वेनीला जैसी सुगन्ध नहीं मिलेगी। सूर्य के ताप में पकी हुई फली वेनीला का आनन्द देगी, किन्तु उससे उत्तम सुगन्धयुक्त सत् प्राप्त न हो सकेगा। तम्बाकू की भाँति इसकी फलियों को भी बड़े धैर्य और सावधानी से पकाना (curing) पड़ता है।

### सत्-वेनीला

बेल से उतारी हुई फली हलके हरे वर्ण की तथा अँगुली जैसी मोटी होती है। वही फली ३-४ महीनों की पकाई के पश्चात्



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पेन्सिल जैसी पतली और कत्थई रंग की हो जाती है। तभी वह वेनीला का सत् निकालने योग्य होती है। चाकू से फली के गोल चक्के काटकर उन्हें हलके, मद्धिम अलकोहल के घोल में नर्म होने तक गर्म करते हैं। तब उस घोल को पुनः कुछ दिन रखे रहते हैं। तब पूरी तरह रंग-रूप और सुगन्ध आदि से वह सत् परिपूर्ण हो जाता है। वही सत् सीलबन्द शीशियों में सत्-वेनीला (Vanilla Extract) के नाम से बिकता है।

कई दिनों की मेहनत से तैयार किया गया वेनीला की फलियों का यह गठ्ठर बाहर जाने को तैयार है

### वेनीला का उत्पादन

मेडागास्कर वेनीला के कुल उत्पादन का ६३% भाग उत्पादित करता है। मैक्सिको २१% उत्पादित करता है और शेष १६% अन्य देशों में उपजता है। उत्तमता के अनुसार वेनीला की पकी हुई फलियों का मूल्य लगभग ८ रु. से ८० रु. प्रति किलोग्राम तक रहता है।

---

### फेफड़ा-बैंक भी

रक्त-बैंक काफी प्रचलित हो चुके हैं, नेत्र-बैंक लोकप्रियता के पथ पर हैं, अब फेफड़े भी बैंकों में मिल सकेंगे। प्रयोग अभी प्रारम्भिक अवस्था में है। कूपर टाउन, न्यूयार्क के डाक्टरों ने कुछ कुत्तों के फेफड़ों को निकाला, प्लास्टिक की थैलियों में बन्द करके रेफ्रिजरेटर में सुरक्षित रखा और पुनः दूसरे रोगी कुत्तों में लगाया तो परिणाम अत्यन्त उत्साहवर्द्धक रहा। यही विज्ञान विकसित होकर भविष्य में मनुष्य के लिए भी कल्याणकारी होगा!

### प्लास्टिक के झाग

रबर के झाग अब नयी वस्तु नहीं रहे। अब प्लास्टिक के झाग मैदान में आ चुके हैं। पश्चिमी जर्मनी के प्रसिद्ध रसायन-निर्माता बी. ए. एस. एफ. द्वारा उत्पादित स्टेरोपर नामक प्लास्टिक-झाग का यह पदार्थ अत्यन्त उपयोगी पाया गया है। भवन-निर्माण के लिए तो यह एक आकर्षक पदार्थ है। कोमल वस्तुओं के पैकिंग में भी यह काम आता है। इस पदार्थ में ९९ प्रतिशत वायु का भाग होने से यह तैरने में भी सहायक है। इसकी पतली परत को कठोर भूमि पर बिछा देने (मल्चिंग करने) से यह मिट्टी को मुलायम तथा भुरभुरी बना देता है। यह गुण कृषि के लिए अत्यन्त उपयोगी है।

### गाड़ियाँ चलती रहीं, सुरंग बनती रही

रेलवे-सुरंगों की मरम्मत की नयी विधि जो सोवियत वैज्ञानिकों ने निकाली है, वह निस्सन्देह प्रशंसनीय है। सुरंगों में जहाँ कहीं दरारें पड़ जाएँ, वहाँ मरम्मत के लिए यातायात को बन्द रखने की आवश्यकता नहीं। पाइपों द्वारा कंक्रीट का घोल दरारों में पम्प की सहायता से पहुँचाया तथा उतारा जा सकता है, जब कि रेलें बराबर सुरंग में चलती रहेंगी।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्यारे बच्चो,

ये दिन सभी के लिए छुट्टियों के हैं। कहीं, किसी को कोई बन्धन नहीं। छुट्टियों के इस आनन्द को बढ़ाने के लिए तुम में से अनेकों के परीक्षाफल आते जा रहे होंगे, बाकी १५ जून तक आ जाएँगे। तुम इन दिनों विभिन्न स्थानों की सैर कर रहे होगे। वहीं यह नया **विज्ञान-लोक** तुम्हारा भरपूर मनोरंजन करेगा।

कुछेक अधिक उत्साही और रचनात्मक क्रियाओं में प्रवृत्त तुम्हारे मित्र-बन्धु अपने छोटे-छोटे संगठन बनाते हुए भावी वैज्ञानिक बनने के पथ पर अग्रसर होंगे। उनके लिए इन दिनों से अच्छा अवकाश और नहीं मिलेगा। अतः वे 'राज रिसर्च लेबोरेटरी, इलाहाबाद' तथा 'रमन साइंस एसोसिएशन, भागलपुर' जैसे नव-स्थापित किशोर-संगठनों को बल देने में लगे रहेंगे।

मेरे पिछले पत्र में दिये गये संकेतों को अनेकों ने उमंग से उठा लिया है और **करो और देखो** के अन्तर्गत जल्द ही से अपनी बनायी वस्तुओं की विधियाँ मेरे पास भेजेंगे। इनके अतिरिक्त जो केवल लेखनकार्य में ही लगे रहना चाहते हैं वे **तुम्हारी कलम से** स्तम्भ के लिए अपनी रचनाएँ तैयार करने में रहेंगे। इसमें तुम कहीं पीछे तो नहीं हो, यह तुम्हीं को देखना है। इस अंक में प्रकाशित 'अपनी टेस्ट-ट्यूब-तुला बनाइए' तुम्हें अवश्य पसन्द आएगा।

बहुत दिनों बाद आज फिर ये सूचनाएँ दोहराने की आवश्यकता है कि (१) फोटो छपने का क्रम देखते हुए ५-६ मास तक अपने भेजे हुए फोटो की प्रतीक्षा करनी चाहिए, (२) सदस्यता कूपन भेजने के बाद प्रमाणपत्र की प्राप्ति के लिए कम से कम १० दिन की प्रतीक्षा आवश्यक है तथा (३) सदस्यता कूपन विज्ञान-लोक में समय-समय पर छपता ही है। अतः वही भरकर भेजना चाहिए। हाथ से बनाया हुआ अथवा प्रतियोगिता कूपन सदस्यता के लिए न भेजना चाहिए।

तुम सबके उत्तम परीक्षाफल के संवाद सुनने की प्रतीक्षा में,

सस्नेह तुम्हारी
**कृष्णा दीदी**

## प्रतियोगिता संख्या ३९ के विजेता

### प्रथम पुरस्कार

गिरीशचन्द्र (११५७) आगरा, गजेन्द्रपाल (१६०५) मेरठ, अशोक गुप्ता (२७०१) लखनऊ, संजय गुप्ता (३४६७) लखनऊ, कैलाशनाथ (३८३२) इटारसी, कौशलकिशोर (६५७३) नेतरहाट, सुरेशकुमार गुप्ता (७१९०) अमृतसर, नरेन्द्र बंसल (७८२८) आगरा, अनिरुद्ध (८१०२) नेतरहाट, घनश्यामदास (९९९७) बीकानेर।

### द्वितीय पुरस्कार

पारसमल (४४१) मद्रास, सुधीरकुमार (१६१९) आगरा, गोपालमाधव (२३७९) मेरठ, प्रदीपकुमार (४१३५) इलाहाबाद, चन्द्रमोहन (४८४४) अजमेर, प्रकाश जोशी (६११३) अजमेर, शान्तिलाल (६४७४) उदयपुर, सज्जनसिंह (७६८१) उदयपुर, टीकाराम (७७७६) बुलन्दशहर, बेंकटलाल (९८९९) कटनी।

### तृतीय पुरस्कार

विजय (२८०) आगरा, चाँदस्वरूप (५३८) आगरा, रमेशचन्द्र (२७६८) कोटा, चन्द्रमोहन (४३१९) इटारसी, अजीतसिंह (५७००) इटारसी, विद्योतम कुमार (७२०९) जोधपुर, बाधूमल (८६४७) कटनी।

**कूपन : प्रतियोगिता संख्या ४१**

नाम .....



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# विज्ञान क्लब के नये सदस्य

कन्हैयालाल
(स. सं. ३२२८)

सत्यप्रकाश
(स. सं. ३३८१)

सुबोधकुमार
(स. सं. ४२८०)

प्रकाशचन्द्र
(स. सं. ४४७१)

वीरेन्द्रकुमार
(स. सं. ४४९७)

६२५८ निर्मलकुमार (१३) मन्दसौर, ५९ कृष्णकुमार (१८) जबलपुर, ६० सेराज अजहर (१९) सीवान, ६१ जयचन्द्र प्रसाद (१५) सुन्दरगढ़, ६२ नीरजकुमार (१३) मैनपुरी, ६३ सुन्दर लाल (१७) बकानी, ६४ सत्यनारायण (१७) बकानी, ६५ गिरिजाशंकर (१४) देवरिया, ६६ अभयकुमार (१६) इन्दौर, ६७ जीवाभाई जूठाभाई पटेल (१५) मालपरा, ६८ राधेश्याम (१६) उतरौत, ६९ विजयमल (१६) जोधपुर, ७० एच. एन. रवि (१४) खमरिया, ७१ रेवाचन्द (१७) जयपुर, ७२ जवरीलाल (१५) पाली, ७३ कमलाकान्त (१५) सुन्दरगढ़, ७४ नरेन्द्रनारायण (१८) लालबाग, ७५ देवकुमार (१४) जैतपुर, ७६ गुरु इकबाल सिंह (१५) राँची, ७७ अशोककुमार (१७) रोहतक, ७८ धीरेन्द्रकुमार (१०) दरभंगा, ७९ सतीशचन्द्र (१५) विदिशा, ८० शिवाकान्त प्रसाद (१२) गया, ८१ दिनकर (१४) लखनऊ, ८२ नवीनकुमार (१५) माधवनगर, ८३ प्रदीपकुमार (१०) वाराणसी, ८४ कन्छेदी लाल (१६) भरतपुर, ८५ चिमन वीधानी (१७) अजमेर, ८६ राजकुमार (१७) कानपुर, ८७ सूर्यपाल (१७) एटा, ८८ रमेशचन्द्र (१६) थानेसर, ८९ विनोदानन्द (१६) मतलुपुर, ९० मदनमोहन (१७) नरही चाँदी, ९१ गोविंद राम (१६) पेण्ड्रवाँ, ९२ विजयकुमार (१५) आजमगढ़, ९३ कृष्णकुमार (१५) रायपुर, ९४ कृष्णमुरारी (१४) कटनी, ९५ यशवन्त कुमार (१४) खरसिया, ९६ रतनलाल (१६) पेण्ड्रवाँ, ९७ ईश्वरदयाल (१६) धामपुर, ९८ श्रवणकुमार (१३) कुरुक्षेत्र, ९९ अनूपकुमार (१३) नेतरहाट, ६३०० विनोदकुमार (१३) आगरा, १ सुभाषचन्द्र (१२) छिंदवाड़ा, २ प्रतापसिंह (१३) कटनी, ३ शिवप्रसाद (१४) वाराणसी, ४ हर्षवर्धन (१५) कुरुक्षेत्र, ५ ज्ञानचन्द (१४) कुरुक्षेत्र, ६ नीलमकुमार (१२) भागलपुर, ७ विनोदकुमार (१२) सोह-सराय, ८ वसंतकुमार (१३) कलकत्ता, ९ कु. मंजू (१३) गोलमुरी, १० कु. निर्मला (१३) जोधपुर, ११ नरेन्द्रपाल (१४) कलकत्ता, १२ प्रवासकुमार (१७) जबलपुर १३ गुरुचरण सिंह (१४) कुरुक्षेत्र, १४ किशनलाल (१५) रायगढ़, १५ सुबोधकुमार (९) मथुरा, १६ स्वर्णजीत (११) इलाहाबाद, १७ सोहनलाल (१५) कुरुक्षेत्र, १८ यादवेन्द्र (१७) मैनपुरी १९ बिहारीलाल (१६) कटनी, २० महेन्द्र सिंह (१४) राँची, २१ नित्यानन्द (१२) नेतरहाट, २२ सुरेशचन्द्र (१५) कुरुक्षेत्र २३ कु. जुगिन्दर कौर (१४) जमशेदपुर, २४ मुनीशकुमार (१५) लखनऊ, २५ कृष्टोकर विनयकान्त (१३) वाराणसी, २६ नरेन्द्रनाथ (१४) जोधपुर, २७ कृष्णचन्द्र (१४) गोरखपुर, २८ कृष्णमोहन (१५) गोरखपुर, २९ गोविन्द नारायण (१३) आसींद, ३० नरेन्द्रकुमार (१५) वर्धा, ३१ चन्द्रलाल (१६) बेलबाग, ३२ हरिगोविन्द (१५) बहराइच, ३३ विजयकुमार (१५) राँची, ३४ पीयूष (९) बिजनौर, ३५ बबनसिंह (१३) बिहिया, ३६ शिरीश (१३) कानपुर, ३७ हंसराज (१४) बिलासपुर, ३८ कुमारी रानी (१३) थापर, ३९ निर्मलकुमार (१२) चित्तौड़गढ़, ४० कुमारी कालिन्दी (१३) हजारीबाग, ४१ सुभाष राव (१७) लशकर, ४२ विपिनबिहारी (१४) पटना, ४३ सुदर्शन प्रसाद (१५) लच्छी कैतुका, ४४ अनिरुद्ध प्रसाद (१६) गया, ४५ सन्तोष सिंह (१७) सहरसा, ४६ कानाभाई (१७) बिलोदरा, ४७ कुमारी रेणु (१०)

सीताराम
(स. सं. ४७३)

उमेशचन्द्र
(स. सं. ५६८)

सुदर्शन
(स. सं. ५७४०)

राधेलाल
(स. सं. ६४२७)

नरेन्द्रकुमार
(स. सं. ६५२१)





CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिवनी, ४८ वसन्त (१४) बुरहानपुर, ४९ अशोककुमार (१४) इन्दौर, ५० देवीलाल (१५) अजमेर, ५१ भगवती प्रसाद (१५) शाहजहाँनाबाद, ५२ विजयकुमार (१४) नेतरहाट, ५३ अश्विनी कुमार (१५) बिजनौर, ५४ रामकुमार (१६) इन्दौर, ५५ उदयतपन (१५) सोनपुर, ५६ रवीन्द्रकुमार (१७) लखनऊ, ५७ सत्यनारायण (१६) दाउदपुर, ५८ ओमप्रकाश (१४) जयपुर, ५९ वेदाकान्त (१२) नेतरहाट, ६० विजयकुमार (१४) सुल्तानपुर; ६१ उमेशचन्द्र (१५) रुद्रपुर, ६२ इन्दुपाल (१४) नयी दिल्ली, ६३ नन्दकिशोर (१३) गिरिडीह, ६४ मनोरंजन प्रसाद (१७) आरा, ६५ उदयनारायण (२२) इलाहाबाद, ६६ मोहम्मद आरीफ (१७) चम्पा, ६७ छेदूलाल (१५) दुर्ग, ६८ दिनेशचन्द्र (१५) मंदसौर, ६९ श्रीनिवास (११) सागर, ७० देवी प्रसाद (१५) डिगबोई, ७१ कुमारी आशा (१६) जबलपुर, ७२ जीतेन्द्र (१३) नेतरहाट, ७३ राधाकृष्ण (१६) खारगोन, ७४ गोपालकृष्ण (१२) वेगूसराय, ७५ आशुतोषकुमार (१०) लखनऊ, ७६ बजरंगी (११) रहेला, ७७ विपिनकुमार (१५) सुपौल, ७८ रामतीर्थ (१७) मोगा, ७९ कु. पुष्पलता (१५) ब्यावर, ८० सोहन लाल (१५) कुरुक्षेत्र, ८१ कृष्णनन्दन (१३) नेतरहाट, ८२ मुरलीधर (१५) ब्यावर, ८३ प्रफुल्लचन्द्र (१६) राजकोट, ८४ विजयकृष्ण (११) गौहाटी, ८५ देवेन्द्रकुमार (१७) अलीगढ़, ८६ धर्मीचन्द (१५) अजमेर, ८७ विजयराज (१३) इन्दौर, ८८ मुकेश (१५) मुजफ्फरनगर, ८९ शंकरसिंह (१४) बंगरा, ९० इन्द्रचन्द्र (८) पाडलियां, ९१ प्रकाशचन्द्र (१२) नेतरहाट, ९२ भरत महतो (१३) दाउदपुर, ९३ केशवकुमार (१२) भागलपुर, ९४ गुलाबचन्द्र (१६) पाडलियां, ९५ सुन्दरशान (१४) खड़गपुर, ९६ गजेन्द्रनाथ (१६) रतनपुर, ९७ रमेशकुमार (१४) चम्पारण, ९८ सूरज प्रसाद (१४) धनबाद, ९९ सूबेदार (१४) बौरवां, ६४०० दीपककुमार (१२) सहारनपुर, १ मिथिलेशकुमार (९) तेलाड़ी, २ हरेश्वर प्रसाद (१५) सोनपुर, ३ पूर्णकुमार (१७) नयी दिल्ली ४ किरणकुमार (१२) नारलाई, ५ भरत प्रसाद (१५) फखरपुर ६ काविन्द्रकुमार (१४) मदनपुर, ७ वीरेन्द्र प्रसाद (२०) दावाँ, ८ चाँदकुमार (१४) जोधपुर, ९ बदरी प्रसाद (२५) दावाँ, १० बलराम सिंह (१५) अजमेर, ११ श्यामसुन्दर (१६) खरगोन, १२ सत्येन्द्र प्रसाद (१८) दावाँ, १३ आर. एस. रामचन्द्रन (१२) जमशेदपुर, १४ अशोककुमार (१५) सारन, १५ लालनारायण (१४) पीरो, १६ मदनगोपाल (१५) भटिण्डा, १७ आर. एस. राजागोपालन (१४) कदमा, १८ अरविन्दकरण (९) जोधपुर, १९ कान्तिलाल (१६) पाली, २० विजयकुमार (१४) गया, २१ रामजी (१४) गया, २२ चोखेलाल (१५) गोंडा, २३ राधागोविन्द (१५) राँची, २४ सूर्यकुमार (१५) देहरादून, २५ सुभाष चन्द्र (१५) ब्यावर, २६ अरुण (१३) सहारनपुर, २७ ओमप्रकाश (१४) कलकत्ता, २८ चतुर्भुज प्रसाद (१५) बटियारपुर, २९ सुनीलकुमार (१३) छपरा, ३० कु. दमयन्ती (१३) अस्थावाँ ३१ निर्मलकुमार (१५) राणावास, ३२ मोहम्मद हुसेन (१८) भानपुरा, ३३ अरविन्दकुमार (१३) बेतिया, ३४ मासूम अली (१४) रायपुर, ३५ सुश्री सरितादेवी (३७) दिल्ली, ३६ सिद्धार्थ कुमार (१२) कोटा, ३७ राधेलाल (१३) बुलन्दशहर, ३८ एम. शंकर राव (१५) अदरा, ३९ जगदीशचन्द्र (२०) मुजफ्फर नगर, ४० रामअवध (१७) बड़हलगंज, ४१ कु. विजय (१५) कानपुर।

स्वतन्त्रकुमार
(स. सं. ६५९४)

लक्ष्मीनारायण
(स. सं. ६६११)

मोहनलाल
(स. सं. ६९७१)

विनयकुमार
(स. सं. ७०५५)

अनिलकुमार
(स. सं. ७३२३)

हर्षदराव
(स. सं. ७४००)

बृजबिहारीलाल
(स. सं. ७४३६)

हीरालाल
(स. सं. ७४९२)

सुनील
(स. सं. ७५१५)

रामअवतार
(स. सं. ७५६१)



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

## इनाम लो

## विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ४१

| | |
|---|---|
| प्रथम पुरस्कार | २५ रु. की पुस्तकें |
| द्वितीय पुरस्कार | २० रु. की पुस्तकें |
| तृतीय पुरस्कार | १५ रु. की पुस्तकें |

**अन्तिम तिथि : ३० जून**

इस प्रतियोगिता में केवल विज्ञान क्लब के सदस्य भाग ले सकते हैं। प्रतियोगिता में भाग लेने का कोई शुल्क नहीं है। नीचे दिये हुए प्रश्नों के उत्तर अलग कागज पर स्याही से साफ-साफ लिखकर पृष्ठ ५७ पर छपे कूपन के साथ लिफाफे में बन्द कर इस पते पर भेज दो :

**कृष्णा दीदी, संचालिका, विज्ञान क्लब, विज्ञान-लोक, आगरा**

लिफाफे पर "विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ४१ का उत्तर" लिखना आवश्यक है। उत्तर ३० जून तक उपरोक्त पते पर अवश्य पहुँच जाने चाहिए। बाद में आये उत्तरों पर विचार नहीं किया जाएगा।

### विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ४१ के प्रश्न

१. वर्णान्धता (colour blindness) का प्रथम परिचय किसने, कब कराया ?

२. सामान्यतः रात में पेड़ काटना निषिद्ध है फिर भी कौन-सा ऐसा पेड़ है जो चाँदनी रात में ही काटा जाता है ?

३. शर्म से लाल हो उठने में कौन-सी शारीरिक क्रिया काम करती है ?

४. हाइड्रोजन पराक्साइड कान में डालने से झाग क्यों उठते हैं ?

५. अत्यधिक घनत्व किस धातु का है ? उसके एक घनफुट टुकड़े का भार क्या होगा ?

६. एक कीड़ा ऐसा है जो दूसरे कीड़े के शरीर में ही जीवन बिता देता है। वह कौन है ?

७. बीच-बीच में आँख की पलकें गिरती रहने का क्या प्रयोजन है ?

८. संसार की द्वितीय विशालतम नदी किस स्थल पर नाली की तरह केवल उचककर पार की जा सकती है ?

९. काले हंस कहाँ पाये जाते हैं ?

१०. कौन से वृक्ष पर मोमबत्तियाँ उग सकती हैं ?

### प्रतियोगिता संख्या ३९ के प्रश्नों के उत्तर

१. दक्षिण अफ्रीका, १९०५ में; वजन ३१०६ कैरट, कलिनन (Cullinan) हीरा।

२. ग्रेगर (Gregor) द्वारा खोज की हुई टिटेनियम (Titanium); वायुयान-निर्माण तथा अन्य इंजीनियरिंग के कार्यों में इस्पात के स्थान पर अधिकतर काम आती है।

३. क्लाइम्बिग पर्च (Climbing Perch), लंगफिश (Lung Fish) तथा फाइटिंग फिश (Fighting Fish) मछलियाँ ऐसी हैं जो वायु से भी आक्सीजन ग्रहण कर लेती हैं और बीच-बीच में श्वास लेने पानी से बाहर आती रहती हैं।

४. जर्दी में निहित गंधक अपनी प्रक्रिया से सिल्वर सल्फाइड (काला यौगिक) बना देता है।

५. पटना, बम्बई, कलकत्ता, आगरा, लखनऊ बीकानेर, मद्रास तथा पूना में।

६. बर्फ के ही चौकों की बनाते हैं, जिन्हें इगलू (igloo) कहते हैं।

७. क्रुक्स (Crooks) ने; खुली धूप में सूर्य की पराबैंगनी रश्मियों से आँखों की रक्षा के लिए।

८. प्रोडक्शन सेक्रेटरी के आदेशानुसार विभिन्न दृश्यावलियों को जोड़ता है।

९. कम से कम ५२ से. मी. मोटा होना आवश्यक है। युद्धस्थल पर रेती की बोरियों की दीवारें इसी प्रयोजन से खड़ी की जाती हैं।

१०. पाइथागोरस के सिद्धान्तानुसार ($३०^२ + १२^२ + १८^२ = १३६९$ का वर्गमूल) लगभग ३७ सें. मी. लम्बी।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# आपके प्रश्न

**सुरेशचन्द्र साहू (४७१५) बेगूसराय**

**प्रश्न—अवोगाड्रो का सिद्धान्त क्या है ?**

**उत्तर**—'विभिन्न गैसों की एक समान मात्राओं में अणुओं की भी संख्या समान ही रहती है।' परमाणु विज्ञान में इस सिद्धान्त का विशेष महत्त्व है।

**कृष्णकुमार (८८७६) बम्बई**

**प्रश्न—तत्त्व सं० १०२ नोबेलियम के पश्चात् नया तत्त्व कौनसा, किसने, कब खोजा ?**

**उत्तर**—तत्त्व सं० १०३ लॉरेन्सियम, घायोरसो (Ghiorso) तथा उसके साथियों ने, १९६१ में।

**जिनेन्द्रकुमार जैन (८६१९) डोंगरगाँव**

**प्रश्न—खतरों के स्थान पर लाल चिह्न, लाल बत्ती का ही उपयोग क्यों होता है ?**

**उत्तर**—यही ऐसा रंग है जिसकी किरणें वायु-मण्डल में कम से कम शोषित हो पाती हैं।

**लक्ष्मीप्रकाश बिस्सा (१६६२) बीकानेर**

**प्रश्न—बर्फ को किस द्रव में अघुलनशील रख सकते हैं ?**

**उत्तर**—अमोनिया-द्रव में।

**रमेशकुमार सोनी (९३६९) पेण्ड्रारोड**

**प्रश्न—चील या अन्य पक्षी आकाश में उड़ने के दर्म्यान कभी-कभी पंख चलाना बन्द कर देते हैं तो भी नीचे क्यों नहीं गिर जाते ?**

**उत्तर**—एक बार गति पकड़ लेने पर उसका संवेग जो उत्पन्न हो जाता है ! गति घटाने, बढ़ाने अथवा बदलने के लिए उन्हें अवश्य पंख मारने पड़ेंगे।

**चन्द्रनाथ सूद (९५३५) रायपुर**

**प्रश्न—स्याही का लिखा किस द्रव से मिटाया जा सकता है ?**

**उत्तर**—ब्लीचिंग पाउडर के हलके घोल की रूई फिराने से; किन्तु परीक्षक की कापी अथवा चेकबुक पर न आजमाना, वर्ना लिखावट तो मिट जाएगी, चोरी खुल जाएगी।

**आर. ए. वेंकटरमन (५८०९) जमशेदपुर**

**प्रश्न—रेफ्रिजरेटर का प्रारम्भ कब से हुआ ?**

**उत्तर**—आज के यन्त्रचालित रेफ्रिजरेटर का प्रारम्भ १९१८ में अमरीका ने किया।

**कृष्णचन्द्र अग्रवाल (५२९२) आगरा**

**प्रश्न—सुना है, पानी आग बुझाने के अतिरिक्त बड़ी आग लगा भी सकता है, सच है ?**

**उत्तर**—गलत नहीं। अमरीका के सान-फ्रान्सिस्को नगर में एक विनाशकारी आग पानी ने ही इस प्रकार लगायी थी। एक बाल्टी में भरे हुए पानी से सूर्य की किरणें परावर्तित होकर निकट के एक फूस के छप्पर पर ही तब तक केन्द्रित होती रहीं जब तक उससे लपटें न उठने लगीं।

**कैलाशप्रसाद गुप्त (९४२३) करवी**

**प्रश्न—जब एक आँख को हम किनारे से जरा दबाते हैं तो एक ही वस्तु दो क्यों दिखती है ?**

**उत्तर**—एक आँख को बन्द करके दूसरी आँख को इस तरह दबाइये तो आपका सवाल गलत हो जाएगा। एक स्टीरियोस्कोप दर्शकयन्त्र की भाँति हमारी दोनों आँखें अपने निर्धारित कोणों पर एक ही वस्तु का सजीव एवं मोटाई युक्त बिम्ब दिखाती हैं। इनमें एक आँख के खुले रहने और दूसरी आँख का कोण बदल जाने के कारण दो बिम्ब दिखते हैं।

**एस. शेखर (१९२५) मुजफ्फरपुर**

**प्रश्न—बिजली के लौह-निर्मित खम्भों में ध्वनि की सनसनाहट क्यों सुनाई देती है ?**

**उत्तर**—इसके लिए खम्भे का पोला होना आवश्यक है। किसी ठोस खम्भे पर कान लगा देखिए, कुछ भी सुनाई न पड़ेगा। पोले खम्भे के अन्दर की वायु बाहर की वायु-तरंगों से प्रभावित होकर क्षीण ध्वनि-लहरें उत्पन्न करती है।

**इस स्तम्भ के लिए प्रश्न पोस्ट कार्ड पर लिखकर कृष्णा दीदी के पते पर भेजिए। पोस्ट कार्ड पर प्रश्न तथा अपना नाम, पता और सदस्य संख्या के अतिरिक्त और कुछ न लिखें।**



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# टेस्ट ट्यूब में बुक

पंकजशरण वर्मा

आप भी एक परखनली में तुला (scale) बना सकते हैं।

**आवश्यक वस्तुएँ**

१. एक परखनली (कांच की)। २. एक कार्क जो परखनली में फिट हो सके। ३. कांच की चौड़ी नली का १ इंच लम्बा टुकड़ा। ४. ताँबे या पीतल का २६ गेज का तार। ५. लोहे का मोटा तार या तीली जो परखनली से २ इंच लम्बी हो। ६. टीन की गोल चकरी जिसका व्यास परखनली के भीतरी व्यास से जरा ही कम हो।

**बनाने की विधि**

लोहे के तार को ठोक-पीट कर सीधा कर लीजिए। टीन की चकरी में बीचोबीच सूराख कर लीजिए। सूराख में लोहे के तार को पिरोकर सिरे पर थोड़ा-सा मोड़ दीजिए ताकि चकरी निकल न सके। तार के उस सिरे को चकरी के बीचोबीच सोल्डर भी कराया जा सकता है।

कार्क के बीचोबीच एक इंच लम्बी नली की मोटाई के बराबर सूराख कर लीजिए। उसमें नली फँसा दीजिए।

ताँबे के पतले तार को किसी बेलनाकार वस्तु पर जिसका व्यास गोल चकरी के व्यास से कुछ कम हो लपेटिये। तार को कुण्डली के रूप में दूर-दूर लपेटिये और लगभग ४ इंच लम्बी स्प्रिंग बना लीजिए। स्प्रिंग बहुत कड़ी न होनी चाहिए।

अब परखनली में तार जुड़ी हुई चकरी उतारिये। तार के बाहरी सिरे से वह ताँबे की स्प्रिंग पिरो दीजिए। बाद में नली सहित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कार्क को फिट कर दीजिए। बाहर निकले हुए तार के सिरे को हुक की तरह मोड़ लीजिए। चित्र से यह सब स्पष्ट हो जाएगा।

परखनली को उलटा कर लीजिए और तार के हुक में एक पलड़ा लटका लीजिए। परखनली पर कागज की एक सफेद पट्टी चिपका दीजिए। अब देखिये कि टीन की चकरी किस स्थान पर है। वहीं कागज की पट्टी पर एक चिह्न लगा दीजिए। पलड़े पर ५ ग्राम का बाँट या १० नये पैसे का सिक्का रख दीजिए। स्प्रिंग दब जाने के कारण चकरी कुछ नीचे खिसक आएगी। इस स्थान पर भी एक चिह्न लगा दीजिए। इन दोनों चिह्नों की दूरी को स्केल द्वारा ५ या १० सेन्टीमीटर के समान भागों में चिह्नित कर दीजिए।

आपकी तुला तैयार है। आप इसे लकड़ी के स्टैण्ड पर भी लगा सकते हैं। पलड़े पर तौलने वाली वस्तु रख दीजिए। चकरी जिस

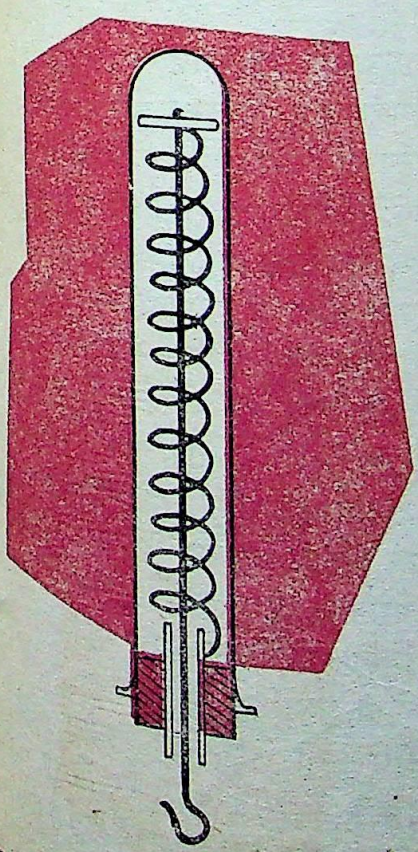

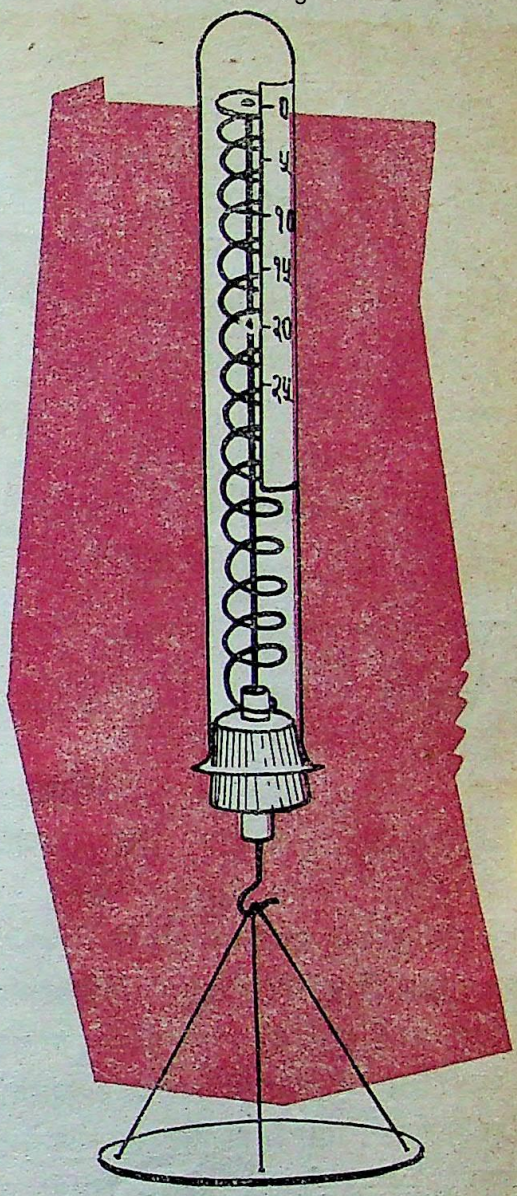


चिह्न तक खिसक आये वही उस वस्तु की तौल होगी।

**ध्यान देने योग्य**

१—तौल करते समय परखनली बिलकुल सीधी खड़ी होनी चाहिए।

२—चकती परखनली को कहीं भी छूनी न चाहिए।

३—स्प्रिंग इतनी हलकी व ढीली होनी चाहिए की १० नये पैसे का सिक्का रखने पर वह कम से कम लगभग १ सेन्टीमीटर दब जाए।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

# पेट्रोल पम्प

शिम्भूशरण (स. सं. १५०४)

मोटर कार के प्रारम्भिक युग में कार के साथ ही अतिरिक्त पेट्रोल भी ले जाना पड़ता था। जरा भी लम्बा सफर हुआ तो २-३ टिन पेट्रोल को लादकर चलना पड़ता जिससे मार्ग में ही मोटर का पेट्रोल समाप्त हो जाने पर कोई परेशानी न उठानी पड़े।

अब वे दिन दूर हो चुके हैं। अब तो किसी भी पेट्रोल-पम्प के आगे से निकलिये, ऐसा मालूम होगा कि थकी-हारी मोटरों के लिए कोई साफ-सुथरा विश्रामगृह बना खड़ा है। वहाँ मोटरों के लिए न केवल पेट्रोल बल्कि हवा का भी प्रबन्ध होता है।

आज मोटरकारों तथा ट्रकों का यातायात वेग से बढ़ता जा रहा है। प्रायः ही पेट्रोल-पम्पों पर सुनाई पड़ता है, बीस लिटर, चार लिटर, दो लिटर इत्यादि।

जगह-जगह पेट्रोल-पम्प लगाने का प्रारम्भ अमरीका में प्रथम महायुद्ध के पश्चात् ही हो चुका था। तत्पश्चात् अन्य देशों में भी शनैः शनैः फैलता चला। प्रारम्भिक पेट्रोल-पम्प हैण्ड-पम्प द्वारा हाथ से चलाये जाते थे। उनमें काफी समय भी लगता था और हिसाब जोड़ने—पैसे लेने-देने—की भी समस्या थी। वह समस्या तो अधिकांशतः हल हो चुकी थी कि पेट्रोल का पीपा साथ ले चलिए, रास्ते भर सम्हालते रहिए। वैसे हस्तचालित पेट्रोल पम्प द्वितीय महायुद्ध के प्रारम्भ काल तक प्रचलन में रहे। तत्पश्चात् कम्प्यूटर सज्जित आधुनिक स्वचालित पम्पों का विकास हुआ।

ये आधुनिक पम्प एक स्विच के सहारे पेट्रोल की अपेक्षित मात्रा मोटर में पहुँचाते हैं और घड़ी पर दिखा भी देते हैं कि कितना पेट्रोल आपने ले लिया। सा



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

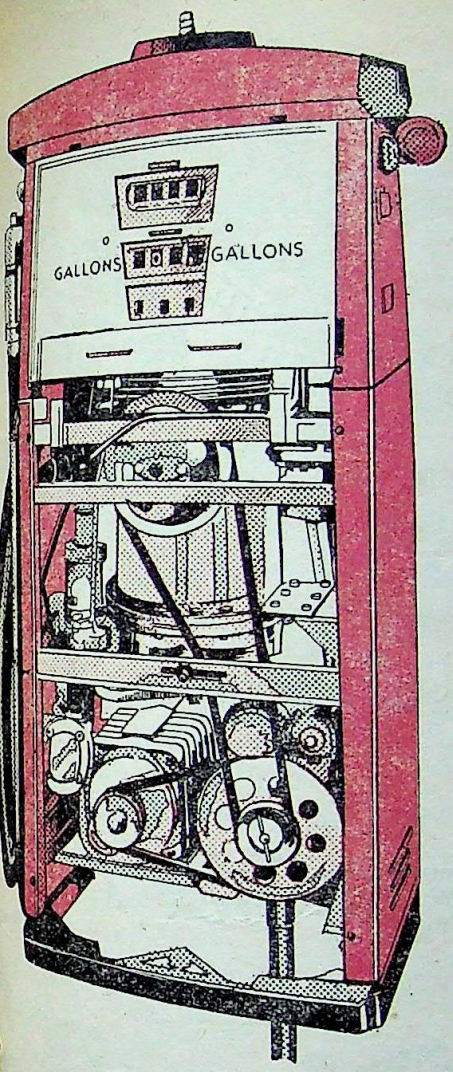


मूल्य देना है अर्थात् हिसाब लगाने की भी आवश्यकता न रही। ऐसे ही एक आधुनिक पेट्रोल-पम्प का भीतरी दृश्य चित्र में अंकित है। इसकी रचना इस प्रकार है:

एक पाइप के द्वारा भूमिगत टंकी से पेट्रोल ऊपर खिंचता है। यह पम्प इलेक्ट्रिक मोटर के द्वारा चलाया जाता है। पेट्रोल के सही माप के लिए आवश्यक है कि उसमें से वायु का भाग निकाल दिया जाए। यह कार्य ड्रेन-लाइन एलीमिनेटर के जिम्मे है। पेट्रोल कितना जा रहा है यह मापन द्वारा सम्पन्न होता है। इसमें अन्दर एक पहिया रहता है जो पेट्रोल की धार में वेग से घूमता रहता है। स्वयं घूमते हुए यह दूसरा पहिया भी घुमा देता है जो घड़ी पर यह बताता है कि आपने कितना पेट्रोल लिया। लिये हुए पेट्रोल का मूल्य निर्धारण इसमें होता है। इसके डायल पर आप पढ़ सकेंगे कि आपको कितना मूल्य देना है। पेट्रोल आ भी रहा है या बीच ही में रुक गया, यह पम्प का कार्यकर्ता खिड़की से देख सकता है।

दूसरा मीटर यह भी बता देता है कि क्या

## आवाज आपकी, आपके बाद

आनसा-फोन (Ansafone) 'फोन पर जवाब' नामक एक नया ही ट्रांजिस्टरयुक्त टेलीफोन ऐसा बना है जो पहले ही से भरी हुई आपकी आवाज में सामने वाले का फोन न सिर्फ रिसीव करेगा, बल्कि संवाद, संदेश और कामकाज भी नोट कर लेगा। आपही की आवाज में वह बोलेगा—'हाँ, कहिए; मैं ही बोल रहा हूँ, मगर घर से बाहर हूँ। आप काम नोट करा दीजिए, थोड़ी देर बाद मैं खुद आपको फोन कर लूँगा।'

## नया पेचीदा पेचकस

चुम्बकीय नोक वाले पेचकस जिनसे लोहे के पेच खोलने-कसने में सुविधा रहती है, नयी वस्तु नहीं रहे। नयापन लेकर जो दूसरा पेचकस सामने आया है उसके द्वारा आप हाथ को हाथ न सूझने-वाले अँधेरे में भी चाहे जैसा पेच खोल सकेंगे। यह इसलिए सम्भव है कि छोटे-बड़े पेचों के लिए अयावत नोकें उस पेचकस के हैण्डिल में जिस जगह फिट की जाती हैं, वहाँ एक टार्च का बल्ब भी लगा रहता है। टार्च का सेल हैण्डिल के अन्दर रहता है और जलाने-बुझाने के लिए स्विच अँगूठे के निकट ही रहता है।



CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


मुझे मेरी जन्म-भूमि की याद दिलाती है!

सुन्दरता और सावधानी से मिश्रित

जब अतिथि आयें सर्वश्रेष्ठ प्रस्तुत कीजिए

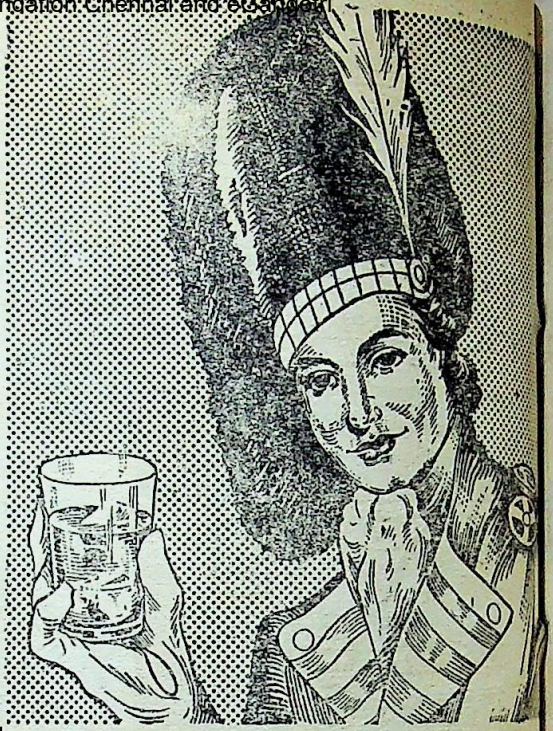

प्रस्तुत कीजिए

# हाईलैंड चीफ

## माल्टेड ह्विस्की

## डायर मीकिन ब्रूअरीज़ लि० स्थापित १८

बोतलों में लखनऊ डिस्टिलरी एवं सोलन ब्रूएरी द्वारा भरा गया


जगदीश मेहरा द्वारा दुर्गा प्रिंटिंग वर्क्स, आगरा में मुद्रित एवं श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा के लिए प्रकाशित

[मुखपृष्ठ बृजवासी फाइन आर्ट ऑफसेट वर्क्स, मथुरा में मुद्रित]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri


# ENGLISH WORKBOOK

- A Modern Course for Writing as well as Reading through the medium of Hindi.
- The Course provides exercises in spelling, punctuation, very simple grammar, sentence-structure, picture-composition, story-writing, cross-word puzzles, letter-writing and comprehension.
- The exercises are fresh and original, varied and interesting, and are carefully *graded*.
- An interesting technique is used to teach the young pupils how to write sentences correctly. They learn by doing, and by doing *correctly*
- Exercises are so arranged that even slow children are sure to make *rapid progress*.
- Illustrations are given to attract the child's attention and to awaken his interest in the subject.
- The series is based upon a limited vocabulary of 1200 words.
- The workbooks are graded and are suitable for use in middle and high schools.

Book I.....Price : 80 nP.
Book II.....Price : Re.1·00
Book III.....Price : Re.1·20

For further enquiries please write to :

**SRI RAM MEHRA & Co.**
**Educational Publishers, AGRA**


CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

कहानी जगत में नया नक्षत्र

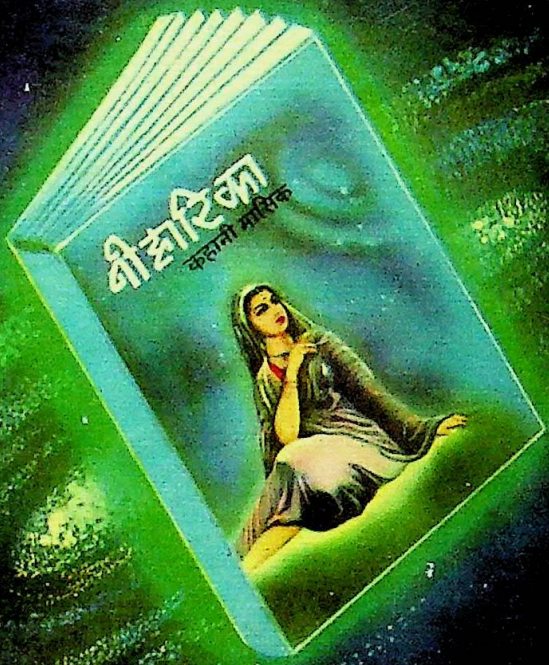


# नीहारिका

• रोचक कहानियाँ

•• नयनाभिराम साज-सज्जा

न्यूज एजेण्टों, बुकस्टालों से उपल

पृष्ठ संख्या ११६

वार्षिक मूल्य ७ रुपये

एक प्रति ६०

श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा